सिद्धयोग

संस्थापक : योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहनजी महाराज

वर्ष : 44, अंक : 10
जनवरी 2012

श्री सिद्धगुफा प्रकाशन

सवाई 283202 (आगरा) उ.प्र.

अमृत कण

अदीक्षिता: ये कुर्वन्ति जपपूजादिका: क्रिया:।
देवि दीक्षा विहीनस्य न सिद्धिर्नच सद्गति।।

अर्थात बिना समर्थ गुरु से दीक्षा प्राप्त किए जो लोग जप, तप, पूजा आदि क्रियायें करते हैं उन्हें उन कार्यों में न तो सफलता मिलती है और न उनकी सद्गति होती है।

◆ ◆ ◆

गुरु प्रकाशयेद् धीमान् मंत्रं नैव प्रकाशयेत्।
अप्रकाश प्रकाशाभ्यां क्षीयते सम्पदायुष:।।

अर्थात् गुरु द्वारा मंत्र को गुप्त रखने से ही मंत्र शक्ति सम्पन्न बनता है। प्रकाशित कर देने पर साधना क्षीण होकर असमय काल कवलित हो जाता है।

◆ ◆ ◆

स्वाध्यायाद्योगमासीत योगात् स्वाध्यायमामनेत्।
स्वाध्याय योग सम्पत्त्या परमात्मा प्रकाशते।।

जप करो फिर ध्यानाभ्यास करो। मंत्र जाप एवं ध्यान योग के बारम्बार अभ्यास से परमात्मा प्रकाशित होते हैं, इष्टदेव के दर्शन होते हैं।

◆ ◆ ◆

मच्चित्ता मद्गत प्राणा बोधयन्त: परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च।।

अर्थात्, मेरे भक्त जिनके मन और प्राण निरन्तर मुझ में ही अर्पित हैं, वे परस्पर एक दूसरे को मेरे दिव्य प्रभाव एवं धर्म-लीला को सुनाते हुए अत्यधिक प्रसन्न होते हैं और फिर मुझ वासुदेव में ही नित्य रमण करते हैं।

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक मासिक-पत्र

ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्ध स्वभावम्
मर्त्योमृत्योर्मुख विवरतो, मुक्तिमाप्नोति सद्यः।
तत्राप्यर्थान् बहुतर विशदान् योगशास्त्रोपदेशान्
कल्याणानाम् भवतु महतां सिद्धये सिद्धयोगः।।

अर्थ :—शुद्ध (निर्विकार) स्वभाव वाले परम ब्रह्म का ध्यान करते-करते मृत्यु के मुख में पड़ा हुआ मनुष्य शीघ्र ही मुक्ति को प्राप्त हो जाता है। उस मुक्ति की प्राप्ति के उपाय स्वरूप योग ध्यान शास्त्र के सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या करने वाली ''सिद्धयोग'' नामक पत्रिका सत्पुरुषों के परम कल्याण की सिद्धि (प्राप्ति) में सक्षम व सहायक हो।

वर्ष : 44 अंक : 10

यो देवानां प्रभवश्चोद्भवश्च
विश्वधियो रुद्रो महर्षिः।
हिरण्यगर्भं पश्यत जायमानं
स नो बुद्धया शुभया संयुनक्तु।

जो रुद्र इन्द्रादि देवताओं को उत्पन्न करने वाला और बढ़ाने वाला है तथा जो सबका अधिपति और महान ज्ञानी (सर्वज्ञ) है। जिसने सबसे पहले उत्पन्न हुए हिरण्यगर्भ को देखा था, वह परमदेव परमेश्वर हम लोगों को शुभ बुद्धि से संयुक्त करें।

जनवरी 2012

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
सनांई (एत्मादपुर) आगरा

SIDDHYOG

HINDI MONTHLY
Propagating Yoga & Spiritual values

संस्थापक :
योग-योगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

सम्पादक :
आचार्य (डा.) दासलाल ब्रह्मचारी

संयुक्त सम्पादक
डॉ. विजय सिंह

प्रबन्ध सम्पादक :
समस्त योग प्रचार मण्डलों के अध्यक्ष एवं गुरु भाई-बहिन

अनुक्रमणिका

1. विशेष लेख – योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहनजी महाराज 3
2. सम्पादकीय 11
3. तनावमुक्त कैसे रहें ? –डॉ. जे.पी. शर्मा 13
4. योग का गुणलय रूप –पं. कृष्ण कुमार पाण्डेय 19
5. 'एक संस्मरण' कृपालीला –डॉ. कमल कुमार 23
6. नववर्ष 2012 –डी.पी. शर्मा 26
7. ज्ञानयोग मोक्ष – श्री हीरालाल शास्त्री 29
8. योग आसन 34
9. पातंजल–योग दर्शन की महत्ता –श्री राम गर्ग 36
10. मैं कृतज्ञ तुम्हारा –ब्रह्मचारी बृजमोहन वशिष्ठ 38
11. स्वस्थ रहने की रामबाण दवा 39

एक प्रति	: रु. 11.00
वार्षिक शुल्क	: रु. 140.00
द्विवार्षिक	: रु. 270.00
आजीवन (10 वर्षीय केवल)	: रु. 850.00

• *हमारा विशेष लेख*

प्राणायाम की परिभाषा

योग-योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज

अपने पिछले लेख में हमने प्राणायाम के द्वारा किस प्रकार क्लेश निवृत्ति की जाती है यह समझाने का प्रयत्न किया था, और हमने मनुस्मृति का उदाहरण दे करके यह बतलाया था कि—

दह्यन्तेहि ध्मायमानानां, धातूनां यथा मलाः।

तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते, मला प्राणस्य निग्रहात्।।

अर्थात् जिस प्रकार सोना, चाँदी आदि धातुओं के मल उनको तपाने से जल जाया करते हैं उसी प्रकार से प्राणायाम करने से इन्द्रियों के भी मल जल जाते हैं।

भगवान पतंजलिदेव अपने योग-दर्शन में साधन पाद के 49वें सूत्र में प्राणायाम का लक्षण इस प्रकार लिखते हैं :-

तस्मिन् सति श्वासप्रश्वास-- योर्गतिविच्छेदः प्राणायामः।।

इस सूत्र पर व्यास भाष्य इस प्रकार है :-

सत्यासनजये बाह्यस्य वायोराचमन श्वासः, कोष्ठयस्य वायोर्निः सारणं प्रश्वासः तयोर्गतिविच्छेदः उभयाभावः प्राणायामः।।

सूत्र का अर्थ इस प्रकार है :- आसन के सिद्ध हो जाने पर श्वास प्रश्वास की गति को रोक देना प्राणायाम कहलाता है। मनुष्य जिस समय बाहर की श्वास खींचकर अन्दर ले जाता है तब प्राण की इस गति को श्वास कहते हैं और कोष्ठ गत वायु को बाहर निकालने की जो गति है उसको प्रश्वास कहते हैं। स्वाभाविक गति से मनुष्य के श्वास और प्रश्वास आते-जाते रहते हैं। इनका गति विच्छेद करना ही प्राणायाम कहलाता है। श्वास प्रश्वास का गति विच्छेद पूरक, कुम्भक एवं रेचक के द्वारा हो जाता है अर्थात् श्वास का रोकना बन जाता है। किन्तु श्वास का गतिरोध करने पर साधक आभ्यन्तर कुम्भक पर ही विजय पा सकता है। इसके अतिरिक्त रेचक, पूरक और कुम्भक के द्वारा मनुष्य प्रश्वास की गति पर नियन्त्रण प्राप्त कर लिया करता है, यह दोनों कुम्भक बाह्य और आभ्यन्तर भेद से प्राण गति का रोधन ही है। दोनों प्रकार के कुम्भक करने से श्वास और प्रश्वास दोनों प्रकार के प्राणों की गति का स्वाभाविक विच्छेद हो जाता है। नूतन अभ्यासी साधक को शनैः शनैः प्राण की गति पर नियन्त्रण प्राप्त करने का प्रयत्न

करना चाहिए। दोनों प्रकार के कुम्भक सिद्ध करते हुए जब अभ्यास ऊँचा उठ जायेगा तब साधक स्वेच्छा पूर्वक विधारक प्राणायाम को भी कर सकेगा। प्राणायाम करने से पहले मनुष्य को चौरासी प्रकार के आसन करते हुए जब शरीर निर्मल एवं शुद्ध हो जाय तब उसको स्वस्तीक आसन पद्मासन सिद्धासन आदि का दृढ़तर अभ्यास करना चाहिए। क्योंकि आसन सिद्धि के बिना प्राणायाम का सिद्धि होना अति कठिन है। इसलिए सूत्रकार ने –

तस्मिन् सति श्वासप्रश्वास योर्गतिर्विच्छेदः प्राणायाम।।

'तस्मिन् सति' का अर्थ ही यह है कि आसन के सिद्ध हो जाने पर ही प्राणायाम का अभ्यास किया जा सकता है। प्राणायाम किस प्रकार करना चाहिए, उसकी विधि क्या है, इसका निर्देश भगवान पतंजलि देव योगदर्शन में इस प्रकार करते हैं :–

बाह्याभ्यन्तरस्तम्भ वृत्तिर्देशकाल सङ्ख्याभिः परिदृष्टो दीर्घ सूक्ष्मः।।

इस पर व्यास भाष्य इस प्रकार है :–

यत्र श्वास पूर्वको गत्यभावः स बाह्यः यत्र श्वास पूर्वको गत्यभावः स आभ्यन्तरः तृतीयः स्तम्भ वृत्तिर्यत्रोभया भावः स कृतप्रयत्नाद् भवति यथा तप्ते न्यस्तनुपले जल सर्वतः संकोचमापद्यते तथा द्वयोर्युग पद् भवत्यभाव इति, त्रयोप्येते देशेन परिदृष्टाः इयानस्य विषयो देश इति, काले च परिदृष्टाः क्षणाना मियन्ताऽवधारणेना वच्छिन्ना इत्यर्थः, संख्याभिः परिदृष्टाः एतावद्भिः श्वास प्रश्वासैः प्रथम उद्घातः तद्वन्निगृहीत तस्य तावद्भिर्द्वितीय उद्घातः, एवं तृतीयः एवं मृदुः, एवं मध्यः एवं तीव्र, इति संख्या परिदृष्टः स खल्वयमेवमभ्यस्तो, दीर्घ सूक्ष्मः।।

अर्थात् अभ्यास किया हुआ प्राणायाम देशकाल और संख्या गति से दीर्घ और सूक्ष्म हुआ करता है। जिस प्राणायाम में प्रश्वास गति का निरोध किया जाता है वह बाह्य एवं जिसमें श्वास को भीतर ले जाकर गति निरोध किया जा सकता है वह आभ्यान्तर और जिसमें स्वास–प्रश्वास की गति को यकायक रोका जाता है उस प्राणायाम को स्तम्भवृत्ति प्राणायाम कहते हैं। यह स्तम्भवृत्ति प्राणायाम बाह्याभ्यन्तर कुम्भक के अभ्यास में आ जाने के बाद साधारण प्रयत्न से भी किया जा सकता है। जिस प्रकार अग्नि से जलाये गये कण्डे पर डाला हुआ जल तत्काल सूख जाया करता है इसी प्रकार बाह्याभ्यन्तर कुम्भक के अभ्यस्त हो जाने के बाद स्तम्भवृत्ति प्राणायाम भी सहज में ही हो जाता है। यह तीनों प्रकार के प्राणायाम देश काल और संख्या के हिसाब से किये जाते हैं। बाह्याभ्यन्तर एवं स्तम्भवृत्ति प्राणायाम का अभ्यास करने के पहले साधक को चाहिए कि अपने प्राणायाम की गति को लम्बी करने के लिए निम्नांकित विधि से प्राण की गति को बढ़ाने का प्रयत्न करे ऐसा होने पर ही वह साधक बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम पर विजय प्राप्त कर सकेगा। जो विधि नीचे लिखी जाती है वह अभ्यासी सन्तों के द्वारा अनुभूत है।

प्राण की गति को बढ़ाने का एक सहज उपाय :–

साधक को चाहिए कि वह सिद्धासन या पद्मासन लगाकर अपने अभ्यास में बैठे। अभ्यास में बैठ करके प्राण को यदिच्छा गति से चलने दे उस पर किसी प्रकार का नियन्त्रण करने का प्रयत्न न करे। केवल मात्र यह देखता रहे कि मेरे प्राण की गति किस प्रकार हो रही है। जब प्राण की गति स्वभावतः स्वच्छ और लम्बी दिखलाई दे एवं मन बिल्कुल निर्मल हो और हृदय में पूर्ण रूपेण आह्लाद हो उस समय साधक को चाहिए अपने प्राण की गति को थोड़ा–थोड़ा लम्बा करता चला जाय। जैसे नासिका के दक्षिण नासा पुट को दाहिने अंगूठे से हल्का दवाब देकर के रोक कर वामनासा पुट से श्वास को साधारण गति से ऊपर खींचे और साधारण गति से जितना लम्बा जा सके उसमें एक या दो मात्रा की वृद्धि कर दे, उसके बाद कुम्भक न करे प्रत्युत्त दूसरी ओर के नासा पुट से उतनी ही संख्या को गिनकर श्वास को बाहर निकाल दे। जैसे एक व्यक्ति ने अभ्यास आरम्भ किया और वह वाम नासा पुट से 10 मात्रा से प्राण को अन्दर ले गया और स्वाभाविक गति से उसने दो मात्रा अधिक बढ़ा दीं तो अब प्राण के निकालने के समय बढ़ाई हुई गणना के साथ ही प्राण को शनैः शनैः निकाले। अर्थात् 12 ही मात्रा से निकाले। यह एक साधारण अभ्यास हुआ, इसी प्रकार से इस साधारण अभ्यास से घबराहट मालूम हो तो फिर दुबारा दक्षिण नासापुट से इसी प्राणायाम को 11 मात्रा से पूरण करे और वाम नासा पुट से 11 ही मात्रा से निकाल दे। पुनः दूसरी वाम नासा से 10 मात्रा से ले जाय और दक्षिण नासा पुट से 10 ही मात्रा से निकाल दे। इसी प्रकार से एक–एक मात्रा कम करके प्राण को सम मात्रा में ले आये। जब ऐसा अभ्यास बन जाये कि प्राण को लेने ले जाने में कोई तकलीफ न हो तब इस प्रकार से प्राण की गति लम्बी होती चली जायेगी। उसके बाद उपरोक्त सूत्र के अनुसार प्राणायाम की मात्राओं को देश काल की संख्या से बढ़ाये।

कुम्भक प्राणायाम बढ़ाने की विधि

कुम्भक प्राणायाम को देश काल एवं संख्याओं से बढ़ाया जाता है। हर प्राणायाम के अभ्यासी को इन तीन का ही अवलम्बन लेना पड़ता है। कोई साधक देश के अवलम्ब से प्राणायाम को बढ़ाता है कोई–कोई काल के और कोई–कोई संख्याओं के अवलम्ब से प्राण को बढ़ाते हैं एवं देश–काल–संख्याओं की अनुभूति साधक को थोड़े ही दिनों में होने लगती है।

देश के द्वारा प्राणायाम का नाम :–

साधक जिस समय प्राणायाम का अभ्यास करता है तो उसको अनुभव होने लगता है कि मेरा प्राण कितनी दूर तक पहुँच गया है। प्राण और मन का बिल्कुल अभिन्न सम्बन्ध है। मन जिस अवधि को निश्चय करेगा प्राण थोड़े समय में वहां तक गति करने लगेगा। जैसे एक साधक ने बाह्य कुम्भक प्रारम्भ किया तो प्राण का रेचन करते समय मन से यह अनुभव करे कि मेरे प्राण की गति इतनी लम्बी हो गई है उसकी अवधि मन में निश्चय कर ले, कि नासिका पुट से निकला हुआ मेरा प्रश्वास कितनी दूर तक पहुँच गया है। मन अपनी उज्वलता से इस माप को

स्वतः ही अनुभव कर लेगा। कुछ दिन (15–20 दिन या महीने भर) तक उसी अवधि को प्रमाण रखकर अभ्यास करता चला जाय, जब यह अभ्यास परिपक्व हो जाये तो प्राण की अवधि को और बढ़ाने की चेष्टा करे और उसी अवधि को बढ़ा कर कुम्भक को बढ़ाता चला जाय। इसी प्रकार करने से देश परिदृष्टा बाह्य कुम्भक बढ़ता चला जायेगा। इसी प्रकार जब साधक आभ्यन्तर कुम्भक का अभ्यास करना प्रारम्भ करे तो पहले–पहल हृदयावधि को प्राण ले जाय और कुछ समय तक हृदय स्थान में कुम्भक को बढ़ाता जाय। हृदयावधि के बाद प्राण को नाभि चक्र तक ले जाय। इसी तरह अभ्यास करते–करते नाभि–चक्र तक ही प्राण की गति आरम्भ हो जायेगी एवं कालान्तर में प्राण को शरीर में व्यापक रहने वाली सत्ता को मन बहुत जल्दी ही अनुभव करने लग जायेगा। इसी प्राणायाम का नाम देश परिदिष्ट प्राणायाम है।

काल परिदिष्ट प्राण ाम :–

इसके अतिरिक्त द ूरे प्रकार के साधक समय की अवधि से प्राण की गति को बढ़ाने के प्रयास में रहा करते हैं काल परिदिष्ट प्राणायाम वह कहलाता है जिसमें प्राणायाम करने वाला साधक समय की म ात्रा को ध्यान में रखे। जैसे पहले रोज दो मिनट का अभ्यास किया, दूसरे रोज पाँच सैकेण्ड बढ़ा दिये, तीसरे रोज दस सैकेण्ड बढ़ा दिये इस तरह से पाँच मिनट, दस मिनट, घण्टा–आध घण्टा बढ़ाता चला जाय। इस प्रकार से साधक बाह्याभ्यन्तर एवं स्तम्भवृत्ति तीनों प्रकार के प्राणायाम को बढ़ा सकता है। इस प्राणायाम का नाम काल परिदिष्ट प्राणायाम है।

संख्या परिदिष्ट प्राणायाम :–

इसी प्रकार से कुछ साधक गणना करते हुए प्राण को बढ़ाया करते हैं। जैसे एक साधक ने 10 मात्रा से ूरक प्राणायाम किया और बीस मात्रा से कुम्भक किया और 15 मात्रा से रेचक किया अब ज्य ं–ज्यों साधक अपने अभ्यास को बढ़ायेगा त्यों–त्यों पूरक 12 मात्रा से, कुम्भक 24 मात्रा से एवं रेचक 18 मात्रा से करेगा तो उसका अभ्यास उत्तरोत्तर बढ़ता चला जायेगा। इस प्राणायाम का नाम संख्या परिदिष्ट प्राणायाम है। इसी प्रकार से साधक ने गणना के रूप में आभ्यन्तर कुम्भक बढ़ाया इसी प्रकार बाह्य कुम्भक भी बढ़ाया जा सकता है। मेरे प्राण की गति लम्बी हुई या नहीं इसके लिए एक साध ारण सा उपाय प्रयोग में लाकर साधक प्राण–गति को देख सकता है। अभ्यास करते हुए साधक धुनी हुई रुई के थोड़े से भाग को नाक के सामने रख दे और उस रुई पर श्वास को फेंके श्वास के स्पन्दन से रुई अवश्य हिलेगी फिर दूसरे दिन कुछ दूरी पर रुई रखकर श्वास को छोड़े यदि दूसरे दिन भी रुई हिल जाय तो समझले कि श्वास कितनी लम्बी हो रही है। इसी प्रकार 15 दिन अभ्यास बढ़ा लेने के बाद फिर इसी तरह परीक्षण करे, तो उसको ज्ञान होगा कि मेरे प्राण की गति कितनी लम्बी हो रही है। मन के दृढ़ संकल्प के साथ प्राण की गति लम्बी होती चली जायेगी। इस प्रकार से देश काल संख्या परिज्ञान प्राणायाम परिपक्वता से प्राण अपने आप विलय होना प्रारम्भ हो जाता है। उस ाणायाम को भगवान

पतंजलिदेव ने –

बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी चतुर्थः

बाह्याभ्यन्तर विषयाक्षेपी नाम का चतुर्थ प्राणायाम कहा है। इस सूत्र पर व्यास भाष्य देखिये।

देश कालसङ्ख्याभिर्बाह्य विषयः परिदृष्ट आक्षिप्तः तथाऽऽभ्यन्तर विषयः परिदृष्ट आक्षिप्तः,

उभयथा दीर्घ सूक्ष्मः तत्पूर्वको भूमिजयात् क्रमेणो भयागत्यभाव श्चतुर्थः प्राणायामः, तृतीयस्तु विषयानालोचितो गत्यभावः सकृदारब्ध एव देश कालसङ्ख्याभिः परिदृष्टो दीर्घ सूक्ष्मः, चतुर्थस्तु श्वास प्रश्वासयोर्विषया वधारणात् क्रमेण भूमिजयादुभयाक्षेप पूर्वको गत्य भावश्चतुर्थः प्राणायाम इत्ययं विशेष।।

अर्थात् देश काल संख्या के द्वारा रेचक द्वारा किया हुआ बाह्य प्राणायाम इतना सूक्ष्म हो जाता है कि वह स्वतः ही रुक जाया करता है इसी प्रकार से पूरक द्वारा किया गया आभ्यन्तर कुम्भक भी गति में सूक्ष्मत्व पाकर के स्वतः ही अवरुद्ध हो जाया करता है। इसी को चतुर्थ प्राणायाम से श्री पतंजलि देव ने वर्णन किया है। इसके निरंतर अभ्यास करने पर स्तम्भ वृत्ति प्राणायाम स्वभावतः होने लगता है। प्राणायाम करने वाले साधकों को चाहिए कि जहाँ पर वह प्राणों पर नियन्त्रण करने का अभ्यास करें वहां पर बताए हुए विधान के अनुसार त्रिबन्ध भी लगाते रहें। उसमें सबसे प्रथम मूलबन्ध का अभ्यास करना आवश्यक है।

मूलबन्ध की विधि और उसका फल :–

हठयोग प्रदीपिका के कर्ता योगीन्द्र आत्माराम ने तीनों बन्धों का उत्कृष्टता के साथ वर्णन किया है जिनका ज्ञान प्राणायाम के साधकों के लिए अत्यन्त ही आवश्यक है। पढ़िये मूलबन्ध का स्वरूप और उसका फल –

पार्ष्णि भागेन संपीड्य, योनिमाकुंचयेद्गुदम्।
अपानमूर्ध्वमाकृष्य, मूलबन्धोऽभिधीयते।।
अधोगतिमपानं वा, उर्ध्वगं कुरुते बलात्।
आकुंचनेन तं प्राहु–र्मूलबन्धं हि योगिनः।।

अर्थात् पैर की एड़ी के भाग से गुदा और लिंग के मध्य भाग को दबावे और गुदा का ऊर्ध्वाकर्षण करे। इसके साथ ही अपान वायु का मन के दृढ़ संकल्प के साथ ऊर्ध्वाकर्षण करे इसी को मूलबन्ध कहते हैं। अधोगति वाले अपान वायु को बलपूर्वक ऊर्ध्वगामी बनाता है इसलिए योगाचार्यों ने इसको मूलबन्ध कहा है –

गुदं पार्ष्ण्या तु संपीड्य, वायुमाकुंचयेद्बलात्।
वारं–वारं यथाचोर्ध्वम्, समायाति समीरणः।।

प्राणापानौ नाद बिन्दू, मूलबन्धेन चैकताम्।
गत्वायोगस्य संसिद्धिं, यच्छतो नात्र संशयः।।

अर्थात् पैर की एड़ी से गुदा द्वार को दबा कर अपान वायु का बलात् ऊर्ध्वाकर्षण करे बार–बार ऐसा करने से वायु का ऊर्ध्व गमन हो जाता है। प्राण और अपान, नाद और बिन्दू यह दोनों मूलबन्ध के लगाने से एकता को प्राप्त होते हैं योग की निश्चय सिद्धि प्राप्त होती है, इसमें किसी प्रकार का संशय नहीं है।

अपान प्राणयोरैक्यं, क्षयो मूत्र पुरीषयोः।
युवा भवति वृद्धोऽपि, सततं मूल बंधनात्।।
अपाने ऊर्ध्वगे जाते, प्रयाते वह्निमण्डलम्।
तदाऽनल शिखा दीर्घा, जायते वायु नाऽहन्ना।।
ततो यातो वह्न्यपानौ, प्राणमुष्ण स्वरूप पकम्।
तेनात्यन्त प्रदीप्तस्तु ज्वलनो देहजस्तथा।।
तेन कुंडलिनी सुप्ता, संतप्ता सम्प्रबुध्यते।
दण्डा भुजंगीव निश्वस्य, ऋजुतां ब्रजेत्।।

अर्थात् मूलबन्ध के लग जाने के बाद प्राण अपान की एकता हो जाने पर शरीर में संचित मल–मूत्र का क्षय हो जाता है। अर्थात् प्राणापान के घर्षण से अन्न का रस भाग जल्दी से व्याप्त होने लगता है और प्राणायाम के अभ्यासी को मल–मूत्र बहुत ही थोड़ी मात्रा में होने लगते हैं। इसका परिणाम यह निकलता है कि जीर्ण शरीर वाला अति वृद्ध भी पुनः यौवन प्राप्त करने लगता है। या ल बन्ध का विशेष परिणाम है। क्योंकि ज्योंही प्राण ऊर्ध्व गति करता है त्योंही वायु से ताड़ित हुआ वहिन् मण्डल पूर्ण रूपेण प्रदीप्त हो जाता है एवं उससे अग्नि की लाट तीव्रता से निकलने लगती है फिर वह अग्नि अपान के बल से ऊर्ध्व गति करके प्राण में मिल जाती है एवं प्राण वायु के समागम से देह में प्राप्त हुई जठराग्नि अत्यन्त प्रज्वलित हो जाती है इसी के फलस्वरूप महाशक्ति कुण्डलिनी जग जाती है, जिस प्रकार दण्डे के मारने से कोई सर्पिणी जग कर भागती है।

बिलं प्रविष्टेव ततो ब्रह्मनाड्यन्तरं ब्रजेत्।
तस्मान्नित्यं मूल बंधः कर्तव्यो योगिभिः सदा।।

अर्थात् कुण्डलिनी जग करके सुषुम्णा विवर में प्रवेश कर जाती है। इसलिए योगियों को चाहिए कि इस मूलबन्ध का अवश्य और नित्य अभ्यास करें।

उड्डियान बन्ध

मूलबन्ध के बाद उड्डियान बन्ध लगाना चाहिए। उड्डियान बन्ध लगाने की विधि –

बद्धोयेन सुषुम्नायां, प्राणस्तूड्डीयते यत:।
तस्मादुड्डीयनाख्योऽयं, योगिभिः समुदाहृत:।।
उड्डीनं कुरुते यस्माद, विश्रान्तं महाखग:।
उड्डीयानं तदेव स्यातत्र बंधो विधीयते।।

उड्डीयान के द्वारा प्राण वायु सुषुम्ना में प्रवेश करता है और ब्रह्मरंध्र की ओर उड़ान करता है इसलिए योगियों ने इसको उड्डियान कहा है। जिस प्रकार से पक्षी आकाश में उड़ान किया करता है उसी प्रकार प्राण भी उड़ान किया करता है इसीलिए उड्डियान इसको कहते हैं।

उड्डियान बन्ध की विधि :-

उदरे पश्चिमं तानः नाभेरुर्ध्वं च कारयेत्।
उड्डीयानो ह्यसौ बन्धो, मृत्यु मांतग केसरी।।
उड्डीयानं तु सहजं, गुरुणा कथितं सदा।
अभ्यसेत्सतत यस्तु, वृद्धोऽपि तरुणायते।।

इसमें पेट को पीठ की ओर तनाव दिया जाता है और नाभि से ऊपर की ओर खींच दिया जाता है। यह बंध मृत्यु रूपी हाथी के ऊपर केसरी अर्थात् सिंह के समान है (मृत्यु से जीतने वाला है) यह उड्डियन बन्ध बहुत सरल तरीके से गुरुपदिष्ट है, जो इसका अभ्यास करते हैं वे जराजीर्ण हो जाने पर भी यौवन प्राप्त कर लिया करते हैं।

नाभेरुर्ध्वमधश्चापि, तानं कुर्यात्प्रयत्नत:।
षण्मासमभ्यसेन्मृत्युं, जयत्येवन संशय:।।
सर्वेषामेव बन्धनामुत्तमो (ह्युड्डीयानक:)।
उड्डीयान दृढे बन्धे, मुक्ति स्वभाविकी भवेत्।।

अर्थात् जो योगाभ्यासी प्रयत्न करके नाभि से उर्ध्व उत्तान करता है। ऐसा व्यक्ति 6 महीने के अन्दर मृत्यु को जीत लेता है। इसमें कुछ भी संशय नां। है। हमारे योगाचार्यो ने इस उड्डीयान बन्ध को सब बन्धों से उत्तम कहा है। जिस योगी साधक ने उड्डियान बन्ध का अभ्यास दृढ़ कर लिया उसकी मुक्ति स्वभाविक हो जाती है। मूल बन्ध के बाद में उड्डीयान बन्ध लगाने से प्राण अपान ऐक्य होकर प्राण की ऊर्ध्व गति हो जाती है एवं वायु पश्चिम वहन करता है। उड्डियान बंध बाह्य कुम्भक में बल देता है। इसलिए मूलबन्ध के बाद इसका अभ्यास करना चाहिए।

जालन्धर बन्ध का लक्षण :-

कण्ठ माकुच्य हृदये स्थापयेच्चिबुकं दृढम्।
बन्धो जालन्धराख्योऽयं जरा मृत्यु विनाशक:।।

बध्नाति हि शिराजालमधोगामि नभो जलम्।
ततो जालन्धरो बन्ध कण्ठ दुःखौघनाशनम्।।

कंठ का संकोचन करके ठोढ़ी को छाती से लगा दें ज़रा मृत्यु का विनाशक जालन्धर बन्ध योगियों ने कहा है। यह बन्ध सिर के नाड़ी समूह को बांधता है और अधोगामि अमृत को रोकता है। सारे दुःखों का नाश करने वाला जालन्धर बन्ध कहा जाता है।

जालन्धरे कृते बन्धे कंठ संकोच लक्षणे।
न पीयूषं पतत्यग्नौ न च वायुः प्रकुप्यति।।
कंठ संकोचनेनैव द्वे नाड्यौ स्तम्भयेद्दृढम्।
मध्यचक्रमिदं ज्ञेयं षोडशाधार बन्धनम्।।

कण्ठ संकोचन कर लेने वाला जालन्धर बन्ध कर लेने पर ऊपर से गिरने वाला अमृत अग्नि में नहीं गिरता और वायु कुपित नहीं होता इस जालन्धर बन्ध के कर लेने पर दो नाड़ियों का स्तम्भन स्वाभाविक हो जाता है। षोडशाधार को बन्धन करने वाला इसको मध्य चक्र कहा गया है।

मूलस्थानं समाकुच्य, उड्डीयानं कारयेत।
इडा च पिंगला वद्ध्वा वाहयेतपश्चिमेपथि।।
अनेनैव विधानेन प्रयाति पवनालयम्।
ततो न जायते मृत्युर्जरारोगादिकं तथा।
बन्धत्रयमिदं श्रेष्ठं महासिद्धैश्च सेवितम्।
सर्वेषाम् हठ तंत्राणाम् साधनं योगिनो विदुः।।

अर्थात् साधक को चाहिए कि पहले मूल बन्ध लगाए फिर उड्डियान करे। इड़ा पिंगला को बाँधकर वायु को पश्चिम मार्ग से चलाए। इस अभ्यास से वायु जब लयता को प्राप्त हो जायेगा इस स्थिति को प्राप्त करने के बाद साधक को जरा मृत्यु का भय कदापि नहीं होता है। यह तीनों बन्ध महासिद्धयोगिराजों के अनुभूत है। यह महाबन्ध और हठयोग की प्राथमिक ऊंची साधना है। इन बन्धों का वेत्ता योगी कभी भी मृत्यु को प्राप्त नहीं होता। इस प्राणायाम के अभ्यासी को इन तीन बंधों का अभ्यास अवश्य-अवश्य करना चाहिए। साधक को चाहिए कि प्राणायाम जब करे मूलबंध को पहले से लगा ले और वायु का रेचन करते हुए उड्डियान लगाए और आभ्यन्तर कुम्भक कर लेने के बाद जालन्धर बन्ध लगाकर बैठे। इस प्रकार प्राणायाम करने वाले साधक यदि बन्ध त्रय के साथ प्राणायाम का अभ्यास करेंगे तो अवश्य मृत्यु को जीत लेंगे और अमरत्व को प्राप्त कर लेंगे।

नववर्ष मंगलमय हो !

– योगाचार्य डॉ. दासलाल ब्रह्मचारी

प्रिय पाठकगण / गुरु भाई – बहिन,

जय गुरुदेव !

अंग्रेजी कलेण्डर वर्ष के अनुसार सन् 2011 का अवसान हो गया है और सन् 2012 का आगमन हो गया है। हमें अतीत वर्ष की उपलब्धियों पर संतोष होना चाहिए। जो त्रुटियाँ रह गयी थी उन्हें सुधारने का प्रयत्न करना चाहिए। अपनी कमियों को दूर कर अनागत वर्ष के लिए उत्साहपूर्वक लौकिक कार्य करते हुए अध्यात्म–बुद्धि रखकर सभी कार्य करें। श्री प्रभु जी की करुणा कृपा से पिछला समय व्यतीत हुआ है अत: उन्हीं करुणा निकेतन का निरन्तर सहज चिन्तन रखते हुए कार्य करते रहना चाहिए। जीवन यात्रा में हमने देखा कि हमारे कितने ही सगे–सम्बन्धी, मित्र गुरुभाई – बहिन संसार से विदा हो गये। हमारी देह भी क्षण भंगुर है। भगवान् ने गीता में अर्जुन से कहा है – **अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम्** अर्थात् हे अर्जुन! इस अनित्य व क्षण भंगुर शरीर जो दु:खों का घर है, इसे पाकर तुम निरन्तर मेरा चिन्तन करो। मनुष्य को सुख और शान्ति उस परम चेतन से जुड़े रहने पर ही मिल सकती है। इस जुड़ने की प्रक्रिया को ही योग कहा गया है।

साधक को प्रात: उठते ही प्रभु से प्रार्थना करनी चाहिए – हे प्रभु ! हमें आत्म शक्ति दो हम यम–नियम के मार्ग पर आरूढ़ रहकर प्रभु निष्ठ रहकर अपने कल्याण पथ पर आगे बढ़ते रहें। अन्तर्यामी प्रभु सबके हृदय में संनिविष्ट हैं वे सबके सुहृद हैं सब का सदा ही भला करते हैं। वे मंगल मूर्ति हैं अकारण करुणा करने वाले हैं। हमारे गुरुदेव भगवान् प्राय: कहते थे – 'तुम लोग श्री प्रभु जी के पावन अभय चरण कमलों का ध्यान, चिन्तन करते रहो, वे सभी संकटों से क्लेशों से बचायेंगे व सब प्रकार से कल्याण करेंगे। मनुष्य को सदाचार व धर्मयुक्त यौगिक जीवन जीते हुए सौ वर्ष की आयु तक स्वस्थ रहकर कर्म करते रहने की इच्छा रखनी चाहिए। साधक को अपना शरीर स्वस्थ रखना चाहिए यह भी पुण्य का काम है क्योंकि स्वस्थ शरीर से ही धर्म एवं साधना हो सकती है। सतोगुण में शरीर स्वस्थ रहता है। रजोगुण – तमोगुण के छा जाने पर शरीर अनेक रोगों से आक्रान्त हो जाता है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए सतोगुण को बढ़ाना चाहिए। सतोगुण वृद्धि का सर्वोत्कृष्ट उपाय ध्यान योग है।

स्वास्थ्य का प्रसंग बताते हुए गुरुदेव भगवान् अपने विद्यार्थी जीवन के छात्रावास की बात बतलाते हुए कहा करते थे कि हम छात्र जीवन में कभी बीमार नहीं हुए। अन्य विद्यार्थी बीमार होते रहते थे। गुरुदेव को कभी बीमार न होने से प्रसन्न होकर गुरुकुल के प्राचार्य जी ने

इन्हें पारितोषिक दिया था। योग साधना में पहला अन्तराय व्याधि है। साधक को व्याधियों से बचने के लिए योग आसन एवं जीवन तत्व साधन की क्रियायें करनी चाहिए ताकि स्वस्थ दीर्घ जीवन की प्राप्ति हो सके। अस्तु !

हम हिन्दुधर्मावलम्बियों का नववर्ष चैत्र शुक्ल से प्रारम्भ होता है। इस बार नया संवत् 2069 मार्च 23, 2012 से प्रारम्भ हो रहा है। इस संवत्सर का नाम 'विश्वावसु' है। 23 मार्च से ही नवरात्र शुरू हो रहे हैं। श्री राम नवमी व्रत 31 मार्च को रहेगा। हमारे हिन्दुओं के सारे उत्सव व त्यौहार विक्रम संवत् की तिथियों के अनुसार ही चलते हैं। हमारा नव संवत्सर भी हम सबके लिए सुख एवं शान्तिदायी हो, सभी निरोगी रह कर योग धर्म का अर्जन करें यही श्री प्रभुजी से बार-बार प्रार्थना है।

मूल्य वृद्धि सूचना

प्रिय गुरुभाई-बहिनों,

जयगुरुदेव,

आपको सूचित किया जाता है कि अत्यधिक महँगाई के कारण ''सिद्धयोग'' मासिक पत्रिका के मूल्य वृद्धि के लिए हम विवश हैं। इसलिए अप्रैल 2012 से पत्रिका का मूल्य 150/- रु. वार्षिक शुल्क तथा 901/- रु. आजीवन (10 वर्षीय केवल) शुल्क किया जा रहा है। आशा है आप हमारा सहयोग करेंगे।

साथ ही मार्च अंक के साथ ''सिद्धयोग'' पत्रिका का वार्षिक शुल्क समाप्त हो रहा है। ग्राहकों को चाहिए कि मार्च 2012 तक वार्षिक शुल्क मनीआर्डर डाक से भेज दें सम्पादक सिद्धयोग (**आचार्य डॉ. रामलाल शर्मा**) के नाम से।

साथ ही कम से कम पाँच नये ग्राहक बनाकर आश्रम की सेवा में योगदान दें।

व्यवस्थापक
''**सिद्धयोग**'' मासिक
श्री सिद्धगुफा सत्थाँई
आगरा

तनाव मुक्त कैसे रहें ?

– डॉ. जे. पी. शर्मा, गुरु आशीष सदन, पाँटा साहिब (हिमाचल प्रदेश)

आज मानव भाग दौड़ की जिंदगी जी रहा है। मन के विपरीत परिस्थितियाँ जब उसके सामने आ जाती हैं, तब वह विचलित हो उठता है। मानसिक वेदना तथा चिन्तायें उसके मन में घर बना कर रहने लगती है। जितना ही उनसे निकलने की कोशिश करता है, उतना ही उनमें उलझता जाता है। इससे वह अपने को असहज महसूस करने लगता है। करना कुछ चाहता है मगर हो कुछ और जाता है। इससे रातों की नींद हराम होने लगती है तथा चिन्ताओं के वशीभूत रहने लगता है – 'चिन्ता है चिता से बढ़कर' यह कहावत उस व्यक्ति पर सटीक बैठती है जो हर क्षण हर पल बैचेनी, असमंजस तथा बुझा–बुझा सा मन वाला होकर रहने लगता है। मनुष्य की इन्हीं परिस्थितियों को 'तनाव' कहा जाता है। तनाव की कोई विशेष परिभाषा नहीं है, यहाँ तक कि डॉक्टर भी जब इलाज करने में अपने को असमर्थ समझने लगते हैं, तब वह रोगी से यही कहा करते हैं – आप तनाव में हैं। प्रायः मनुष्य तनाव में उत्तेजना में रहने लगता है। मानसिक उत्तेजनाओं की प्रतिक्रिया ही तनाव कहलाती है। समय परिवर्तनशील है, प्रकृति परिवर्तनशील है, जीवन भौतिकीय बन गया है। चारों तरफ चमक ही चमक दिखाई देती है। अतः मनुष्य भी अपने सीमिति साधनों से ऊँची–ऊँची कल्पनाओं के स्वप्न देखा करता है। अपने स्वप्नों को साकार रूप देने में असफल होने लगता है, तब वह मन से टूट जाता है। आज चाहे मनुष्य हो, स्त्री हो सभी कल्पनाओं के सागर में तैर रहे हैं। प्रौढ़, बच्चा, वृद्ध कोई भी तनाव से मुक्त नहीं है। जितनी धन, सम्पत्ति उसके पास है, उससे अधिक अर्जन करने की ललक सभी में समान है। मनुष्य निन्यानवे के फेर में उलझा हुआ है। उसे अपने ईश्वर प्रदत्त भाग्य–भोग पर विश्वास ही नहीं है। इसी कारण तनाव में जीवन जी रहा है तथा दुःखी है। उसके चारों तरफ भयंकर समस्यायें मुँह बाये खड़ी हैं, जिनका उसके पास कोई समाधान नहीं है। जो मनुष्य जितना वर्तमान से जुड़ा है, वह उतना ही दुःखी है। आज कलयुग के समय में मानव भौतिकवादी बन बैठा है। बिना परिश्रम से ही मालामाल होने की लालसा उसे हर पल सताती रहती है। मन हरक्षण हैरान–परेशान रहता है। दूसरों को सुखी देखकर उसे दुःख की अनुभूति होती है। ईश्वर पर विश्वास नहीं करता तथा पूरे विश्व की सम्पदा अपने पास ही समेट लेना चाहता है। यही कारण है उसके मानसिक तनाव में जीने का। अतः इन समस्याओं से बचने का हमें प्रयत्न करना होगा तथा अपने पुरुषार्थ पर विश्वास रखना होगा, आत्मबल बढ़ाना होगा, नहीं तो मानव पाप कर्म करने को उद्यत होता ही जायेगा।

मनुष्य के तनाव में रहने से अनेकों प्रकार के भयंकर रोग हो जाते हैं। जैसे हृदय रोग,

उच्च रक्त चाप, निम्न रक्त चाप, मधुविकार, गुर्दे के रोग, जोड़ों का रोग, अल्सर, कैंसर, एलर्जी विकार, सिरदर्द, कब्ज विकार, चक्कर आने के रोग, मिर्गी शुक्राणु अल्पता इत्यादि। स्त्रियों में मासिक धर्म विकार, हिस्टीरिया, अनियमित रक्त विकार हो जाते हैं।

आजकल प्रायः तनाव में रहने से रात को नींद नहीं आती। अतः डॉक्टरों के पास जाते हैं, क्योंकि तनाव की कोई विशेष दवा नहीं है, इस कारण डॉ. प्रायः नींद लाने वाली नशीली दवाइयां ही तनाव के रोगी को देते हैं, जिनका मानव के जीवन पर दुष्प्रभाव देखा गया है। रोगी आलसी और कमजोर बन जाता है। उसके सोचने की शक्ति प्रायः कम होने लगती है। कई बार तो शराब पीने की लत पड़ जाती है। इस प्रकार जीवन नरक बन जाया करता है तथा मनुष्य निराशा में जीने लगता है।

सब भाई–बहनों तथा बच्चों की जानकारी के लिए श्री प्रभु जी की परम कृपा से कुछ सामान्य निम्न उपाय बतलाने की कोशिश कर रहा हूँ, जिनसे आप लाभ प्राप्त कर पायेंगे, ऐसी मेरी कामना है –

(1) **रात को हाथ–पैर–मुँह धोकर सोयें** – ध्यान रखें रात को सोने से पूर्व अपने हाथ, पैर तथा मुँह पानी से साफ कर लें, जिससे दिनभर की जमी गन्दगी निकल जायेगी तथा नींद अच्छी आयेगी। शरीर की थकान दूर हो जायेगी। मुँह धोने के साथ–साथ ही गले को भी पानी से भली प्रकार साफ करें तथा मुँह की गन्दगी बाहर निकाल दें। जिनको देर से नींद आती हो, वह पैरों के तलवों की सरसों के तेल से मालिश करके सोयें। सोने से पूर्व लघुशंका अवश्य जायें, नहीं तो रात को नींद टूट जाती है तथा दोबारा नींद प्रायः बड़ी देरी से आती है।

(2) **प्रातः घूमने अवश्य जायें** – प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में उठना लाभकारी माना गया है। ब्रह्ममुहूर्त का समय सुबह चार बजे कहा गया है। अतः सुबह उठने का समय निश्चित कर लें। सुबह जागने के समय ईश्वर स्मरण, प्रभु स्मरण, सद्गुरु देव दर्शन, देवी–देवताओं के दर्शन करें, जिससे आपको बड़ी सांत्वना मिलेगी तथा सारा दिन प्रसन्नता में ही व्यतीत होगा। शौच जाने के बाद, सुबह कम से कम दो मील घूमने जायें तथा वापस आयें। सुबह नई चेतना शक्ति का शरीर में संचार होगा। अगर कोई पार्क, बगीचा है तो वहाँ कुछ समय बितायें तथा प्रकृति की सौन्दर्यता का आनन्द लें। जब घूमने जायें, मुँह बन्द रखें तथा केवल नाक से सांस लें, बातचीत में समय बर्बाद न करें। घूमते हुए जो बातचीत करते हैं, वे सुबह घूमने का पूरा लाभ नहीं ले पाते। ऐसा करने से प्राण वायु अन्दर जायेगी तथा धीरे–धीरे तनाव बाहर निकलता जायेगा और आप तरोताजा रहेंगे।

(3) **नियमित ध्यानासन करें** – योग ब्रह्माण्ड की सर्वश्रेष्ठ विद्या है। योग के आठ अंग होते हैं। ध्यान उनमें से सबसे महत्वपूर्ण है। मानसिक विकारों के लिए ध्यान साधना सर्वश्रेष्ठ उपाय है। अपने ध्येय पर ध्यान करना उत्तम होता है। ध्येय, लक्ष्य को कहते हैं ध्येय अपने इष्टदेव–सद्गुरु स्वरूप मूर्ति अथवा ईश्वर स्वरूप या प्रतिमा कुछ भी ले सकता है। प्राणायाम

साधना से ध्यान पक्का हो जाता है। योगासन साधनायें प्राणी को ध्यान की तरफ प्रेरित करती हैं। अतः यथासंभव ध्यान–योगासन करने से तनाव में विशेष लाभ होता है।

(4) अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं करें – अपनी बुद्धि विवेक को यथासंभव प्रयोग करके किसी सीमा तक आप अपनी मानसिक वेदनाओं – चिन्ताओं को कुछ हद तक कम कर सकते हैं। संकल्प–विकल्प के बल पर अपनी समस्यायें स्वयं हल करने का प्रयत्न करें। हर मनुष्य को अपने तनाव के कारणों का ज्ञान रखना चाहिए कि तनाव किस कारण से हो रहा है। कारण मालूम हो जाने पर उसका समाधान भी करना आवश्यक है। समाधान मिलते ही आप तनाव मुक्त हो जायेंगे। जीवन में सदैव आशावादी बनिये, निराशाओं को दूर रखिये।

(5) आवश्यकतानुसार कार्य बांटकर करिये – मनुष्य के अनेकों कार्य होते हैं। उन्हें समय तथा आस्यकतानुसार घर के अथवा कार्यालय के सभी सदस्यों में कार्य बांटकर करने से कार्य आसानी से, सहज रूप से तथा शीघ्रता से हो जायेगा तथा आपके अकेले पर उसका बोझ, जिम्मेदारी भी न पड़ेगी। सारे कार्य एक साथ न करें। मान लीजिए आज आपको तीन कार्य करने हैं। बच्चों की फीस जमा करानी है, टेलीफोन के बिल का भुगतान करना है तथा बिजली बिल का भी भुगतान करना है तथा सभी के स्थान जहां जमा कराने हैं, प्रायः अलग–अलग विपरीत दिशाओं पर स्थित है। अतः इन तीनों की प्राथमिकता निश्चित कर लें। प्राथमिकता के आधार पर पहले बच्चों की फीस जमा करायें। तत्पश्चात् टेलीफोन तथा बिजली के बिजलों का भुगतान करें। ऐसा करने से आप तनाव मुक्त रहेंगे।

(6) जीवन में अच्छे मित्र बनें तथा बनायें – कहावत है 'अकेला चना क्या भाड़ फोड़ेगा। वास्तव में अकेला मनुष्य कुछ भी नहीं कर सकता। यही कारण रहा है कि प्रकृति द्वन्दमयी बनी है। जैसे – रात–दिन, मनुष्य–स्त्री, अच्छा–बुरा, प्रकाश–अंधेरा, सूर्य–चन्द्रमा इत्यादि। जीवन में साथी का होना आवश्यक है। सृष्टि के कार्यों को करने के लिए जीवनसाथी की आवश्यकता भी उन्हीं में से एक है। अपने मन के सारे रहस्य आप जैसे जीवन साथी से बांटते हैं तथा अपने को सहज महसूस करते हैं, ठीक उसी प्रकार सच्चा मित्र आप का भला कर सकता है। सच्चा मित्र आपके दुःखों में सहायक बनता है। परंतु जो मित्र केवल सुख के समय आपके चारों तरफ मंडराते रहते हैं तथा दुःखों के समय आपसे दूर हो जाते हैं, ऐसा मित्र, मित्र नहीं वरन् शत्रु होता है। मित्रता की परख निम्न प्रकार से भलीभांति हो जाती है –

आवत ही हरषे नहीं, नैनन नहीं सनेह।
तुलसी वहाँ न जाइये चाहे कंचन बरसे मेह।।
आवत ही हँसि गले मिले, विदा होत जाय रोय।
तुलसी ऐसे मित्र कँ भूखे रहिये सोय।।

अखिल ब्रह्माण्ड नायक योगेश्वर श्री कृष्ण जी महाराज ने गीता 5/29 में कहा है –

मैं सब यज्ञ तपस्या भोगी,

लोकन्ह प्रभु जानै मोइ योगी।

प्रानन्हि सफल मीत मो इमानी,

ब्रह्म भिन्न कछु लखै न ज्ञानी।।

अर्थात् मेरा भक्त मुझ को सब यज्ञ तथा तपों का भोगने वाला, सम्पूर्ण लोकों का ईश्वरों का ईश्वर तथा सम्पूर्ण भूत प्राणियों का मित्र, स्वार्थ रहित दयालु और प्रेमी मानता है, वह परम शान्ति को प्राप्त होता है।

(7) इच्छाशक्ति तथा मनोबल को दृढ़ रखें – प्राय: देखा जाता है कि मनुष्य किसी कार्य में सफल नहीं होता, तब अपने को बड़ा निराश, हताश मानने लग जाता है। अत: अपनी दृढ़ इच्छा शक्ति, साहस रखकर पुन: कार्य सफलता में लग जाना चाहिए। निराशावादी आदत से सदैव बचते रहिये। इससे तनाव मुक्त रह पायेंगे।

(8) सत्संग करें – सत्संग का अर्थ है, सच्चा साथ करना। देखा जाता है जहाँ प्रभु चर्चा चल रही हो, वहा का वातावरण स्वच्छ, शान्तिमयी होता है। अत: ऐसे सज्जन पुरुषों की वाणी सुनिये, उस पर ध्यान दीजिए, मनन करिये। धार्मिक ग्रन्थों जैसे – रामायण, गीता, चालीसा जो भी आपको अच्छा लगता है, उसे प्रतिदिन पढ़ने के अभ्यास में लाइये। आप कुछ दिनों में अत: मन से प्रसनचित्त पायेंगे। आलसी, कामी व्यक्तियों का साथ छोड़ने में ही आपकी भलाई है।

(9) अपने कार्यों को समय पर करें – प्राय: मनुष्य अपने आलस–सुस्ती के कारण कार्य करने मे टालमटोल करता रहता है, जिससे कार्य समय पर नहीं हो पाता। अत: आवश्यकता इस बात की है कि हर कार्य को समय पर ही करने का प्रयत्न करें जिससे नाकामी हाथ नहीं लगती है तथा मन भी तनाव से मुक्त रहा करता है।

(10) क्रोध से बचते रहें – छोटी–छोटी बात पर क्रोध करना छोड़ दें। क्रोध करने से स्वयं को तो हानि होती है, वरन् जिस पर क्रोध किया जाता है, उसे भी तनाव पैदा हो जाता है। दूसरों पर दया भाव रखें तथा कोई कार्य अगर दूसरों से कराना है तब उसे पूर्ण समझा कर कार्य करने को कहें। क्रोध, पाप का मूलक होता है। बच्चों पर क्रोध न करें, उन्हें भली प्रकार समझायें तथा प्यार से काम लें, तो बच्चा खुश होकर आपकी आज्ञा पालन करने लगता है।

(11) सकारात्मक सोच बनायें – हमेशा अच्छा सोचें तथा आशावादी बनें। नकारात्मक सोच से तनाव बढ़ता है। सब कुछ परमपिता परमात्मा की इच्छा से हो रहा है, ऐसा विचार बनाये रखें। हम केवल उस प्रभु से प्रार्थना कर सकते हैं। जीवन का प्रत्येक कार्य अपने अनुसार ही हुआ करता है, अपनी इच्छा न थोपें क्योंकि इच्छानुसार जब कार्य में सफलता नहीं मिल पाती, तब मनुष्य उदास हो जाता है, उससे तनाव पैदा होता है। आत्मविश्वास से हर कार्य में सफलता

मिलती है। अगर हम दूसरों के प्रति सही सोच रखते हैं, तब अपने कार्यों में स्वभावतः बाधायें नहीं आया करतीं। चुनौतियों का साहसपूर्वक सामना करें। अपनी इच्छाशक्ति को कार्यरूप में बदलने की भावना रखें तथा ईश्वर में श्रद्धा–प्रेम बनाये रखें, आप पायगें कि सब कार्य बड़ी सरलता तथा तत्परता से हो रहे हैं।

(12) हँसने की आदत डालें – जीवन, सुख तथा दुःखों से भरा है। प्राणी का जन्म पिछले जन्मों के संचित संस्कारों के कारण ही हुआ करता है। संस्कार पुण्य तथा पाप कर्मों के फल ही तो होते हैं। ठीक ही कहा गया है –

जैसा कर्म करेगा बन्दे वैसा ही फल पायेगा।
बोया पेड़ बबूल का तो आम कहाँ से खायेगा।।

अतः दिन में चार से सात बार खूब जोर से हंसे, इससे शरीर दुरुस्त तथा मन प्रफुल्लित रहेगा तथा मन इधर–उधर भटकेगा भी नहीं। आजकल हँसना भी एक कला है तथा तनाव भगाने का सुगम और सस्ता इलाज है। स्वयं खुश रहो तथा दूसरों को खुश रखने की कोशिश करो।

(13) सन्तुलित तथा सात्विक आहार अपनायें – सात्विक भोजन करने से आप का मन भी सात्विक विचार पैदा करता है। सात्विक भोजन में हरी पत्तियों वाली साग भाजी का प्रचुर मात्रा में सेवन करें। रजोगुणी भोजन से शरीर में सुस्ती आती है जब कि तमोगुणी करने से शरीर में तरह–तरह की बीमारियाँ होने का भय बना रहता है। शरीर स्वस्थ रहे इस पर ज्यादा ध्यान होना चाहिए। ऋतुकालीन साग, सब्जियों तथा फलों का प्रचुर मात्रा में सेवन करें। बेमौसमी उत्पादों से सतर्कता बर्ते, उन्हें खाने से शरीर में विकार होने लगते हैं। आहार में रोटी, चावल, दाल, सब्जी, फल, दही, चटनी तथा सलाद का उपभोग करें। मिर्च–मसाले तथा नमक कम मात्रा में खायें, इनके सेवन से यकृत सम्बन्धी परेशानियाँ बढ़ जाया करती हैं। भोजन समय पर तथा सुपाच्य करें। बासी या रखा हुआ खाने से बचें। ज्यादा चिकनाई के सेवन से बचें। बाजार में बन्द पैकेटों में मिलने वाले फास्टफूड वस्तुओं के सेवन से बचें तो लिवर खराब नहीं होगा। अतः आपका आहार हर तरह से सन्तुलित हो। सदा एक ही वस्तु का सेवन न करें, बदल–बदल कर खायें। अगर तनाव से बचे रहेंगे तथा कोई परेशानी भी नहीं होगी।

(14) घर के अन्य सदस्यों का भरपूर ख्याल रखें – अक्सर प्रायः देखा गया है कि घर के प्रधान व्यक्ति की बातों पर ध्यान दिया जाता है जबकि घर के अन्य सदस्यों की बातों की अनदेखी की जाती है जो तनाव का कारण बन जाती है। ध्यान इस बात पर दिया जाय कि अन्य सदस्यों की उपेक्षा न करके उनकी बातों को भी सकारात्मक रूप से स्वीकारें जिससे वह अपने को आनन्दित समझें। इन बातों से निश्चय ही घर में तनाव नहीं रहेगा। आपसी सहयोग विचार से ही हर कार्य करना न्यायोचित रहता है, नहीं तो छोटी–छोटी बातों से आपस में मनमुटाव बढ़ता है जिससे तनाव बना रहा करता है।

(15) सप्ताह में एक दिन सब घर के सदस्य इकट्ठे बैठकर वार्तालाप करें – प्रायः देखा गया है कि आजकल की भागदौड़ की जिन्दगी में घर के सदस्यों को एक दूसरे की समस्याओं के सुनने तथा यथोचित समाधान देने का समय ही नहीं होता। इससे बच्चे, पत्नि, भाई अथवा अन्य सदस्य बुझे मन से रहने लगते हैं। इसलिए सप्ताह में एक दिन जो अवकाश का दिन हो सकता है, सब सामूहिक रूप में बैठें, चाय नाश्ता, दोपहर का भोजन, रात्रि के भोजन का समय उसके लिए उपयुक्त हो सकता है। सब एक दूसरे से खुलकर वार्तालाप करें। उन्हें ध्यान से सुनें तथा उनकी अगर कोई समस्या है तो यथोचित समाधान निकालें। इससे भी आपसी सहयोग की भावना बढ़ेगी तथा तनाव कम होगा।

अतः आप अपना घर का वातावरण शान्त, स्वस्थ रखना चाहें तो उपर्युक्त सभी बातों पर ध्यान दें तथा अपना, सामाजिक, मानसिक, आर्थिक एवं आत्मिक विकास करें। उपर्युक्त नियमों के पालन करने से आप सदैव ही तनाव मुक्त रह पायेंगे। निम्न भावना से सदैव तनाव मुक्त रहेंगे –

असतो मा सद्गमय।

तमसो मा ज्योतिर्गमय।

मृत्योर्माऽमृतंगमय।।

नाश के कारण

स्तब्धस्य नश्यति यशो विषमस्य मैत्री
नष्टेन्द्रियस्य कुलमर्थ परस्य धर्मः।
विद्याफलं व्यसनिनः कृपणस्य सौख्यं
राज्यं प्रमत्तचिवस्य नराधिपस्य।।

आलसी का यश नष्ट हो जाता है, दुष्टों की मैत्री नष्ट हो जाती है, नष्टेन्द्रिय पुरुष का कुल व धर्म नष्ट हो जाता है, व्यसनी की विद्या नष्ट हो जाती है, कंजूस की सुख–सुविधाएं नष्ट हो जाती हैं और मतवाले मन्त्रियों के शासन की राज्य व्यवस्था नष्ट हो जाती है।

योग का गुणत्रय रूप

– पं. कृष्ण कुमार पाण्डेय, प्रवक्ता संस्कृत, गोरखपुर

सृष्टिकर्त्ता ईश्वर के इस सृष्टि को जानकर ही संसार से मुक्त होकर सिद्धि को प्राप्त किया जा सकता है। योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को सम्बोधित कर कहते हैं कि –

परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम्।

यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः॥

अर्थात् हे अर्जुन ज्ञानों में भी अति उत्तम उस परम ज्ञान को मैं तुमसे कहूँगा, जिसको जानकर सब मुनिजन एवं साधक संसार से मुक्त हुए तथा परम सिद्धि को प्राप्त हो गये।

वास्तव में किसी भी वस्तु के बारे में व्यक्ति पूर्ण रूप ज्ञान प्राप्त कर लेता है तो उसे किसी प्रकार की व्याकुलता एवं भय नहीं होता है। जिसने भी ज्ञान प्राप्त किया वह निश्चय ही इस धराधाम से संदेह मुक्ति के अधिकारी बन गये। युधिष्ठिर इसके साक्षात् उदाहरण है। ऋषि मुनि तो ईश्वर के मानस पुत्र माने जाते हैं। जो उन्हीं की तरह सृष्टि का निर्माण भी कर देते हैं। ईश्वर स्वभावतः तीन गुणों युक्त होकर इस सृष्टि का निर्माण करता है। इसमें प्रकृति उसकी सहचरी के रूप में कार्य करने के लिए साथ अवतरित होती है। क्योंकि मूल प्रकृति ही सम्पूर्ण भूतों की योनि अर्थात् उत्पत्ति स्थल है तथा ईश्वर उस मूल प्रकृति के उत्पत्ति में चेतन समुदाय रूप गर्भ को स्थापित करता है। धीरे–धीरे जगत का स्वाभाविक विस्तार होता चला जाता है। भगवान ने इस योग के गुणत्रय के बारे में बताया कि –

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृति सम्भवाः।

निबध्नन्ति महा बाहो देहे देहिनमव्ययम्॥

अर्थात् हे अर्जुन तीनों गुण सत्त्व, रज एवं तम ये प्रकृति से ही उत्पन्न अविनाशी जीवात्मा को शरीर में बाँधते हैं। इनका कार्य भी भिन्न–भिन्न प्रकार का होता है। इसमें सत्वगुण व्यक्ति के स्वभाव एवं वृत्ति को प्रकाश स्वरूप होकर सद्मार्ग की ओर प्रेरित करता है। जिससे व्यक्ति की धर्म में अभिवृद्धि होती है। ऐसे सुन्दर अवसर पर उसे पूरे मनोयोग से आत्मकल्याण के लिए तत्पर हो जाना चाहिए।

रजोगुण राग और कामना को उत्पन्न करने वाला होता है। इसमें व्यक्ति की विषयों में स्वाभाविकी आसक्ति होती है। आसक्ति के कारण ही जीवात्मा उसी प्रकार के कर्म और फल में बंधता है। जैसे ही व्यक्ति के अन्दर रजोगुण समाप्त होता है, उसके अन्दर तमोगुण उत्पन्न होने लगता है। ऐसे में व्यक्ति मोह, लोभ, आलस्य, प्रमाद, क्रोध, निद्रा के वशीभूत होता चला जाता

है। उसकी सुवृत्ति कुवृत्ति में परिवर्तित होती है। ये विभिन्न प्रकार की वृत्तियाँ आपस में एक दूसरे वृत्तियों को दबाकर स्वाभाविक रूप से ऊपर हो जाती हैं। कदाचित ऐसी वृत्तियों में व्यक्ति का शरीरान्त हो जाता है। तो वे विभिन्न रूपों में पुन: जन्म का कारण बन जाती है। यदि व्यक्ति की सात्विकी वृत्ति में मृत्यु हो तो वह स्वर्गादि उत्तम लोकों को प्राप्त करता है। यदि रजोगुणी वृत्ति में मरता है तो मनुष्य योनि में जन्म लेता है। यदि तमोगुणी वृत्ति में मृत्यु हो तो वह जीव कीट, पतंग, पशु आदि तिर्यग एवं मूढ़ योनियों में जन्म को प्राप्त करता है। गीता कहती है –

तमसि मूढ़ योनि जायते।।

सम्पूर्ण जीव ईश्वर के त्रिगुण रूपों से बँधकर ही कार्य करते हैं। भगवान ने उसके स्वरूप को स्पष्ट करते हुए बताया कि –

उर्ध्वगच्छन्ति सत्वस्था मध्येतिष्ठन्ति राजसा:।
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधोगच्छन्ति तामसा:।।

अर्थात् अर्जुन सात्विकी वृत्ति वाला स्वर्गादि उच्च लोकों में रजोगुण वाला मध्य तथा तमोगुण वाला अधोगति को अर्थात् नीच योनियों या नरक को प्राप्त करता है। इसलिए व्यक्ति को सतो वृत्ति वाला बनना चाहिए। इसके लिए व्यक्ति को सद्ग्रन्थों का अध्ययन, नैत्यिक पूजा पाठ, धार्मिक अनुष्ठान, सद्गुरु के वचनों का सम्यक् पालन, गुरु मन्त्रों का जाप, वीतरागी पुरुषों का ध्यान, आदि करना चाहिए। इनमें से किसी का भी आश्रय ग्रहण कर व्यक्ति अपनी वृत्तियों को रजोगुण एवं तमोगुण से बचाकर रख सकते हैं। अन्यथा चंचल वृत्तियाँ मन को सद्मार्ग से अलग कर देती हैं।

जो व्यक्ति सद्गुरु की कृपा से तीनों गुणों का उल्लंघन कर जाता है। ऐसा साधक और उसकी स्थिति अद्भुत हो जाती है। योगेश्वर भगवान ने ऐसे साधकों के बारे में बताते हुए कहा –

गुणानेतानतीत्यत्रन्देही देह समुद्भवान।
जन्ममृत्युजरादु: खैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते।।

अर्थात् हे अर्जुन ऐसा पुरुष जो सदैव मेरा चिन्तन करते हुए शरीर की उत्पत्ति के कारण स्वरूप इन तीन गुणों का उल्लंघन कर जाता, वह जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि सब प्रकार के दु:खों से मुक्त होकर परमानन्द को प्राप्त कर जाता है। 'यद्गत्वा न निर्वतन्ते' तद् धाम' में निश्चय ही चला जाता है।

साधक अर्जुन जो समस्त मानव जाति का प्रतिनिधित्व करते हुए सबके कल्याण हेतु स्वाभाविक मनुष्योचित जिज्ञासा से भगवान से प्रश्नों को पूछता है। उसने पूछा प्रभो कैसे यह समझा जाय कि अमुक साधक तीनों गुणों का उल्लंघन कर गया है। यहाँ उल्लंघन का तात्पर्य तीनों गुणों से अतीत हो गया। ऐसे व्यक्ति की स्थिति को बताते हुए भगवान ने कहा – अर्जुन जो

व्यक्ति उस सच्चिदानन्द त्रिगुण स्वभाव वाले परमात्मा के नित्य एकभाव में स्थित हुआ माया के प्रपंच से अतीत, अभिमान रहित अन्तःकरण में तीनों गुणों के कार्य रूप प्रकाश प्रवृत्ति अर्थात् सात्विकी वृत्ति, मोहादि वृत्ति के प्रकट होने और न होने पर किसी काल में भी न तो कोई इच्छा, द्वेष आदि विकार आते ही नहीं है। यही व्यक्ति के अतीत होने के प्रधान गुण हैं। कहने का मूल अर्थ कामनाओं से रहित व्यक्ति ही जगत के समस्त कार्य व्यापार को समभाव से करते हुए सद्मार्ग की ओर बढ़ता है। ऐसा व्यक्ति भी उस अतीत की श्रेणी में आयेगा आज इस कलिकाल में भी ऐसे व्यक्ति जो विभिन्न प्रकार कामनाओं से बिलकुल अछूते हैं। किन्तु वे अपने को प्रकट नहीं करते हैं। ऐसे व्यक्ति से बात करने पर विचित्र सा अनुभव होता है। वे कबीर की तरह घर फूक की मस्ती वाले होते हैं। वास्तव में जो मन का पक्का धनी है, वे ही ईश्वर के करीब है। जो मात्र तन का धनी है वह ईश्वर के कितनी दूर है कहा नहीं जा सकता है। ऐसा साधक स्वाभाविक रूप से आत्मभाव में स्थित हुआ सुख दुःख को समान समझता हुआ, सोने एवं मिट्टी में भी समान भाव रखने वाला, प्रिय और अप्रिय को एक समान मानने वाला है। निन्दा स्तुति पर बहुत ध्यान नहीं देता है। मान तथा अपमान में सम रहता है। मित्र और शत्रु को भी समान रूप से समझने वाला हो जाता है। ऐसा व्यक्ति किसी भी कार्य में कर्तापन का अभिमान नहीं रखता है। जो निरन्तर एकाकी भाव से परमेश्वर का चिन्तन करता रहता है, वह व्यक्ति भी तीनों गुणों को लांघ कर परम पद का अधिकारी बन जाता है। एक सामान्य प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि क्या इस कलिकाल में भी ऐसे व्यक्ति मौजूद हैं? निःसंदेह ऐसे व्यक्ति है। अभी तीस अगस्त 2011 के सन्डे नई दुनिया की पत्रिका में नेपाल के बारा जिला स्थित रत्नापुरी गाँव के बामजान के बारे में पढ़ने से ज्ञात हुआ। यह बालक रत्नापुरी के भयंकर जंगलों में वृक्ष के विशाल कोटर में सदैव ध्यानस्थ रहता है। मीडिया बालक के बारे में जानकर उसके पास पहुंची कि बालक कहीं ढोंग तो नहीं कर रहा है। जिससे लोग प्रभावित हो रहे हैं। लेकिन साँच को आँच कहाँ। भीड़ देखकर बालक अपना स्थान परिवर्तित करता रहता है। बामजान बिना खाये पिये कई दिनों तक समाधि में रहता है। यद्यपि सरकार भी छानबीन कर रही है। लेकिन दुनियावी लोग साधक और साधन के गूढ़ रहस्यों का तत्व जान पाने में सफल नहीं हो सकते हैं। क्योंकि आध्यात्म गुप्त एवं सूक्ष्म अनुभवों की अमूल्य निधि जिसका आनन्द सूक्ष्म वृत्तियों में रहकर ही क्षेत्री उन सूक्ष्म तत्वों का आनन्द लेता है। उसको व्यक्त नहीं करता है। क्योंकि उसको व्यक्त के लिए शब्द कम हैं। ऐसे सूक्ष्म तत्व के बारे कहा जाय तो वह वैसा ही है जैसे गंध का आनन्द तो लिया जा सकता है लेकिन उसके स्वरूप के बारे में पूछा जाय तो व्यक्त करना असम्भव है। सूरदास के शब्दों में कहा जाय –

ज्यों गूंगे मीठे फल को रस अन्तरगत ही भावै।
परम स्वाद सबही सु निरन्तर अमित तोष उपजावै।।

वस्तुतः बामजान भी लोगों के लिए ऐसा ही बना हुआ है। बालक निश्चय ही गीता के

अनुसार ''योग भ्रष्टोभिजायते'' वाले संस्कार से युक्त है। उसके संस्कार संसारी होते हुए भी असंसारी है। उस वागजान के ही शब्दों में 'आध्यात्मिक अभ्यास के बगैर संसार समाप्त हो जाय, क्योंकि धर्म के माध्यम से ही संसार की रक्षा हो सकती है।' इस कथा को प्रेरित प्रसंग हेतु उद्‌धृत किया गया है। जिसका उद्देश्य मात्र इतना है कि इस कलिकाल में भी साधकों की कमी नहीं है। ईश्वर के गुणत्रय को जानकर ही वागजान आज सबका पूज्य बना हुआ है। अन्त में भगवान ने कहा –

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्या व्ययस्य च।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यै कान्तिकस्य च॥

अर्थात् गुणत्रय ईश्वर ं स्वरूप में अमृत का नित्य धर्म का, अखण्ड एक रस आनन्द का, आश्रय विद्यमान है। जिसे ानकर साधक आत्म कल्याण का भागी हो जायेगा।

''सर्वत्र ईश्वर की छवि निहारते रहना ज्ञानयोग है। निश्चल भाव से अपने को ईश्वर के हाथ सौंप देना भक्ति योग है और ईश्वर भाव से सभी प्राणियों के कल्याण के लिए निष्काम कर्म करते रहना कर्मयोग है। यह तभी संभव है जब अन्तरात्मा के दिव्यसूत्र में बुद्धि, मन और इन्द्रियों को गूँथ दिया जाय। ईश्वर सर्वव्यापक होने के कारण समस्त प्राणियों के ह्रदय में सदा विराजमान रहते हैं। अतः मन के द्वारा विषयों, धन एवं प्रभुत्व की आसक्ति का मानसिक त्याग कर पूर्ण समर्पण भाव से ह्रदयस्थ परमात्मा का चिन्तन एवं आश्रय ग्रहण करने से शाश्वत् शान्ति सुलभ होगी।''

'एक संस्मरण' – कृपालीला

डॉ. कमल कुमार, लखनऊ

इस विषय का नाम एक संस्मरण रखते हुए बहुत कुछ आश्चर्य भी हो रहा है, क्योंकि जो कुछ घटित हुआ वो तो वास्तव में स्मृति से लोप ही है, फिर संस्मरण कैसा, परंतु जीवन में जो भी घटना घटित हुई है, वो स्मृति पटल पर तो अंकित हो ही जाती है, प्रत्यक्ष रूप से ना सही तो परोक्ष रूप से ही। आनन्दकन्द श्री प्रभुजी ने किस प्रकार मेरे एक अत्यन्त क्लिष्ट कर्म को अतिसूक्ष्म रूप से भुगतान करा दिया वही मैं आपको बताना चाहता हूँ।

जीवन अपनी निर्बाध गति से दौड़ रहा था, निर्बाध और अत्यन्त तीव्र। दिन कहाँ, रात कहाँ पता नहीं, कब सोमवार से मंगलवार होकर इतवार हो जाता, पता नहीं। इसी क्रम में पूरी तरह से जप, तप, ध्यान तो नहीं, परंतु आनन्दकन्द सद्‌गुरुदेव भगवान एवं अखिल ब्रह्माण्ड नायक महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज के नित्य नियमित सुबह शाम आरती पूजन का कार्यक्रम सुचारू रूप से चल रहा था।

अचानक परम आदरणीय आचार्य श्री वासलाल जी के लखनऊ आगमन का समाचार प्राप्त हुआ, उनका लखनऊ में पदार्पण हुआ तथा उनके दर्शनों का सुअवसर प्राप्त हुआ। कुछ घण्टों तक उनका दिव्य सानिध्य एवं आशीर्वाद भी प्राप्त हुआ। संतों के मन की थाह कौन ले सकता है, वो किस पर कब क्या और कैसे कृपा कर दें, ये तो वे स्वयं ही जान सकते हैं। उनके इस अति लघु सत्संग के बाद श्री प्रभु जी की संध्या कालीन आरती के पश्चात् जप करने की मन में अतितीव्र इच्छा पैदा हुई और मैं जप करने बैठ गया। इस प्रकार का नियम नित्य होने लगा, श्री प्रभु जी आरती के बाद जप करने के लिए बैठा देते और खूब जप करते, कभी–कभी तो रात भर। इसके अतिरिक्त एक और प्रेरणा हुई श्री प्रभुजी द्वारा प्रवत्त जीवन तत्व आसन एवं अन्य योगासन करने की, इसका क्रम भी नियमित चल रहा था।

मन में अतिसूक्ष्म रूप से विचार करने पर यही समझ में आता है कि श्री प्रभु जी अत्यन्त बड़े क्लिष्ट संस्कार के सूक्ष्म रूप में भुगतान के लिए ये सब करा रहे थे।

यह बात दिनांक 5 अक्टूबर 2011 की है। आनन्दकन्द सद्‌गुरुदेव योग योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज का प्राकट्य दिवस 6 अक्टूबर को मनाने की पूर्ण तैयारी सवाई आश्रम में हो रही है। मन अतिप्रफुल्लित है, क्योंकि प्रभुजी के जन्मोत्सव में सम्मिलित होने का विचार बन चुका था। इसकी प्रेरणा भी आनन्दकन्द गुरुदेव जी ने अचानक ही मन में पैदा की। झांसी आश्रम में गुरुदेव का जन्मोत्सव चल रहा था, उसका निमंत्रण पत्र डॉ. आर. के. जौहरी जी लखनऊ के नाम किसी अन्य गुरुभाई के घर पर आया। उसको गन्तव्य तक पहुँचाने की

जिम्मेवारी मुझे दी गई, जैसे ही मैंने वह निमंत्रण पत्र खोला, उसमें श्री महाप्रभुजी एवं श्री गुरुदेव के दर्शन प्राप्त किये, तभी मेरे मन में सवाई आश्रम जाने की अत्यन्त तीव्र प्रेरणा हुई। यह बात 4 अक्टूबर की है, मैंने घर पर आकर सबको बताया कि 5 अक्टूबर को रात्रि में मेरा संवाई आश्रम जाने का प्रोग्राम बन गया है। मन में इसी उत्साह के साथ मैं सुबह 5 अक्टूबर को अपनी क्लीनिक करने जा रहा था जो शहर से लगभग 30 किलोमीटर दूर है, जहाँ मैं सप्ताह में दो बार जाता हूँ।

जैसे कोई व्यक्ति सोकर उठता है, उसी प्रकार अचानक मेरी आंख खुलती है, मैं अपने आप को पुलिस की जीप में पाता हूँ। पास में दो लड़के बैठे है, एक ने मेरी ठोढ़ी पर अपना रूमाल रखा है, दूसरा मोबाइल फोन पर नम्बर डायल कर रहा है। सबसे बड़ा आश्चर्य यह कि मुझे जैसे कोई आश्चर्य नही हुआ कि मैं यहाँ क्या कर रहा हूँ, कैसे आया, क्या हुआ? शायद कुछ क्षण बाद मुझे आभास हुआ कि मेरा एक्सीडेंट हो चुका था, मेरा जबड़ा टूट चुका है, पैरों में भी चोट है। इसी अवस्था में जो सज्जन पास में बैठे मोबाइल से लोगों को सूचना दे रहे थे, मैंने एक नम्बर भी डायल किया। आनन्दकन्द श्री प्रभुजी की कृपा से दर्द का नाम मात्र भी आभास मुझे ना था। मन स्थिति श्री प्रभुकृपा से बड़ी विचित्र थी, जब मैंने याद करने की कोशिश की तो सिर्फ इतना याद आया कि मैं तो बाइक चला रहा था, बाकी कुछ नहीं मालूम। यह सब एक दिवास्वप्न की तरह था, जो सत्यरूप में परिवर्तित हो चुका था। मैं इस सत्य को समझ चुका था परंतु श्री प्रभुजी ने मन में कोई विक्षेप नहीं पैदा होने दिया। एक बार मन में विचार आया कि पैर में चोट लगी तो ठीक, जबड़ा तो ना टूटता, फिर दूसरे क्षण मन कहता है, जैसी श्री प्रभुजी की इच्छा।

आनन्दकन्द श्री प्रभुजी ने कितने बड़े संकट से रक्षा की इसका अन्दाजा तो एक्सीडेंट की भयावहता से ही लगाया जा सकता है। उससे पहले मैं एक तथ्य उजागर कर देना चाहता हूँ कि शारीरिक चोट से अधिक कष्टकारी और स्थाई होती है मानसिक चोट क्योंकि शारीरिक आघात तो कदाचित कुछ दिनों या महीनों में ठीक हो जाता है, परंतु मानसिक आघात कभी-कभी पूरी जिंदगी आपके साथ रहता है और आपके पूरे जीवन को प्रभावित करता है। आनन्दकन्द श्री प्रभुजी की इस कृपा को याद करके मन बार-बार प्रफुल्लित हो जाता है कि उन्होंने मुझे इस प्रकार को कोई मानसिक आघात न होने दिया, अन्यथा ये आगे साधना में भी विघ्न पैदा कर सकता था।

अब मैं आपको एक्सीडेंट वाली जगह ले चलता हूँ। जैसा कि मैंने बताया कि मुझे एक्सीडेंट के बारे में कुछ भी याद नहीं, जैसे श्री प्रभुजी ने एक्सीडेंट से पहले ही मुझे अपने चरणों में ले लिया हो। वहाँ उपस्थित लोगों ने जैसा बतलाया वैसा मैं आपको बताता हूँ।

मैं बाइक चला कर जा रहा था, मुझको पीछे से किसी ट्रक ने टक्कर मारी, उससे मैं उछल कर सड़क पर आ गिरा, सामने से एक 10 पहियों वाला ट्रक आ रहा था, उसने ब्रेक मारने की बजाय मुझको दोनों पहियों के बीच में लेना उचित समझा, इस प्रकार पूरा दस पहियों वाला

ट्रक मेरे ऊपर से गुजर गया। मेरे हेल्मेट के चार टुकड़े हो गये। वहाँ काफी संख्या में लोग उपस्थित हो चुके थे। किसी को मेरे बचने की उम्मीद नहीं थी, क्योंकि बाद में कुछ लोगों का फोन भी घर आया कि वो जिनका एक्सीडेंट हुआ है अभी जीवित हैं या मर गये।

आनन्दकन्द श्री प्रभुजी की कृपा का बराबर अनुभव इस पूरे घटनाक्रम में रहा, श्री प्रभुजी की कृपा से मेरा सभी सामान सुरक्षित था, सबसे बड़ी बात मोबाइल को खरोंच तक नहीं आयी, क्योंकि मोबाइल टूट जाता तो किसी से भी सम्पर्क हो पाना मुश्किल था।

इस प्रकार की घटनायें जिसके बारे में आपको रंच मात्र भी अनुभव ना हो, जीवन के क्षणभंगुर होने का अहसास कराती हैं। कौन जानता है, किसके जीवन में कब क्या घटित हो जाये। इसलिए हम सभी लोगों को चाहिए कि जीवन के क्षणभंगुर होने को सत्य मानकर अपने–अपने अभ्यासों में लग जायें, क्योंकि जब क्लिष्ट संस्कारों के भोग का समय आता है तो श्री प्रभुजी के कृपापात्र बालकों एवं साधकों द्वारा ये भुगतान सूक्ष्म रूप में हो जाता है, अन्यथा इस प्रकार के संस्कार अत्यन्त कष्टकारी भी हो सकते हैं।

इसी सन्दर्भ में मैं एक और बात जोड़ना चाहूँगा, मेरे मन में दशहरा (6 अक्टूबर) वाले दिन श्री प्रभुजी के दर्शनों की तीव्र इच्छा थी, परंतु मैं तो अस्पताल में भर्ती था। एक सज्जन श्री संजय यादव, जिनको मैंने कुछ समय पूर्व अखिल ब्रह्माण्ड नायक महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज एवं अनन्त कोटि सदगुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी महाराज का स्वरूप दिया था कि इनको अच्छे से फ्रेमिंग कराकर अपने मंदिर में रख लेना। दशहरा वाले दिन वो सज्जन मुझे अस्पताल में देखने आये और उनके साथ श्री प्रभु द्वय के दिव्य स्वरूप भी थे। मैंने उनको खूब प्रणाम किया और मन ही मन कहा कि प्रभु आपने मुझे अपने धाम नहीं बुलाया तो आप स्वयं दर्शन देने चले आये। आप धन्य है, आपके जैसा कृपालु इस संसार में दूसरा कोई नहीं।

बोलो – सद्गुरुदेव भगवान की , जै।

परम प्रभु योग योगेश्वर महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज की , जै।

योग योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज की , जै।

श्री सिद्ध गुफा सवाई धाम की, जै।

कर्मायत्तं फलं पुंसां बुद्धिः कर्मानुसारिणी। तथापि सुधयश्चाऽऽर्याः सुविचार्यैव कुर्वते।।

– चाणक्य नीति

मनुष्य को कर्मों के अनुसार ही फल मिलता है और बुद्धि भी कर्मों के अनुसार ही चलती है फिर भी बुद्धिमान और सज्जन लोग किसी भी कार्य को भली भांति विचार करके ही करते हैं।

नववर्ष 2012 के शुभागमन पर त्रिभाषा-रचित (संस्कृत, अंग्रेजी तथा हिन्दी) में पद्यात्मिका स्वरचनायें

संस्कृत-भाषायाम्

नवं शुभं सर्वमभीप्सते जनः,
तज्जातु श्रेयः श्रयतां श्रियञ्च।
गतं विस्मृतं चेदधिकाधिकं वरं,
ना नूतनतां नोज्झति नृस्वभावः।।1।।

कालात्ययात् वर्षमुपैति नूत्नं,
वर्षं प्रवेशे वयमुल्लसामः।
अस्मच्च युष्मच्च भवन्निमित्तं,
किं वर्षमाहरति तत् परिकल्पयामः।।2।।

सर्वे जनाः केवलमेक-भद्रं,
शुश्रूषवः सन्ति दिदृक्षवश्च।
चिकीर्षवः केचन सन्ति विरलाः,
स्वार्थं समुत्सृज्य परार्थमीप्सवः।।3।।

सर्वात्मनां वर्षमिदं नवीनं,
सुखाय भवतात् भगवत्प्रसादात्।
सर्वे प्रभो ! संलभतां निजेप्सितं,
दृष्टं, श्रुतं च विहितं भवतेऽस्तु स्वस्तये।।4।।

This is in Hindi verses of Sanskrit verses

सभी चाहते जन नया औ भला हो,
कल्याण सुख-सम्पत्ति दे वह कदाचित्।
बिसरा, जो बीता, भले वह भला था,
नया चाहता जन यत: वह स्वभावकृत।। (1)

समय बीतता है नया वर्ष आता,
नया है अत: साथ उल्लास लाता।
हमारे, तुम्हारे तथा आपके हित,
नया लायेगा क्या, ! चिन्तन जगाता।। (2)

सभी जन सुखद कल्पनायें हैं करते,
श्रवणेच्छु वा दर्शनेच्छु हैं रहते।
कुछ एक विरले जो मन में भी धरते,
परकीय हित हेतु निज स्वार्थ तजते।। (3)

सर्वात्म कल्याण निमित्त वर्ष,
भगवत्कृपा से मिले मोद – हर्ष।
प्रभो ! इष्टप्रद यह नवोत्कर्ष-वर्ष,
दर्शन, श्रवण, मनन से शुभ पूर्ण वर्ष।। (4)

May the New Year be a blissful one.

(This is in English verses of Sanskrit verses)

Everyone desires novelty and nobility,
May it bless us with bliss and happiness.

Forgotten is the bygone even though proven better,
It's human temperament to hanker after newness. (1)

The Time elapses and the New Year dawns,
Bearing newness within carries with it delight.
Sharing with ourselves, yourselves & the revered ones,
What has it to offer makes the mind adroit. (2)

All and sundry resume pleasing presumptions,
Aspirants remain they to hear and to see,
A few ones are found devoted to do,
Selfless service for others casting aside me & we. (3)

May this New Year be for all the beings,
A source of pleasure with the kind Grace of the God.
May all attain one's own desired objects,
From whatever seen, heard and done by
the Blessings of the Lord ! (4)

Dated : 1st January, 2012,

Sincerely Yours
Ownself

D.P. Sharma
306-A (Abhishek), Eldeco, Udyan-II
Raebareli Road, Lucknow.
Ph. No. : 0522-2440324,
Mob. : 8948389705

ज्ञान, योग और मोक्ष

श्री हीरालाल शास्त्री, फर्रुखाबाद (उपनिषदों के आधार पर)

ज्ञान योग –

महर्षियों का कथन है कि –

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः

अर्थात् ज्ञान के बिना मोक्ष नहीं होता है –

हृषीकेश वचन –

सर्वे जीवाः सुखैर्दुःखैर्माया जालने वेष्टिताः।
तेषां मुक्तिकरं मार्गम्, माया जाल निकृन्तनम्।
जन्म मृत्यु जरा व्याधि, नाशनं मृत्युतारकम्।
नाना मार्गैस्तु दुष्प्राप्यं, कैवल्यं परमं पदम्।।

अर्थात् सभी प्राणी सुख दुःख आदि माया जालने से बंधे हैं उनको मुक्त करने का मार्ग केवल माया जाल को काटना है माया बन्धन कट जाने से जन्म मृत्यु बुढ़ापा, रोग नष्ट होकर मृत्यु से भी तारने वाला हो जाता है वैसे कैवल्य पद नाना मार्गों से दुष्प्राप्य ही रहता है।

क्योंकि शास्त्रों के जाल में पड़े हुए होने से वह सज्जन बुद्धि से मोहित हो जाते हैं इस कारण वही क्या देवता भी उस अनिर्वाच्य पद का वर्णन करने में असमर्थ होते हैं।

कहा भी है –

पतिताः शास्त्र जालेषु प्रज्ञया तेन मोहिताः।
अनिर्वाच्यं पदं वक्त, न शक्यं तैः सुरैरपि।।

अतः जीव को कैवल्य प्राप्ति के लिए सर्व प्रथम काम, क्रोध, भय, लोभ, मोह, मद, रजोगुण, तमोगुण, जन्म–मृत्यु, कार्पण्य, शोक, तन्द्रा, क्षुधा, तृषा, तृष्णा, लज्जा भय, दुःख, विषाद, हर्ष आदि दोषों से रहित होने पर जीव केवल संज्ञक होता है

काम क्रोध भयञ्चापि, मोह लोभ मदो रजः।
जन्म मृत्युश्च कार्पण्य, शोकस्तन्द्रा क्षुधा तृषा।
तृष्णा लज्जा भयं दुःखं विषादो हर्ष एवच।
एभिर्दोषर्विनिर्मुक्तः सजीवः केवलो मतः।

अतः इन दोषों को साधन करने से पूर्व ही छोड़ने का प्रयत्न करना चाहिए।

योग हीनं कथं ज्ञानं मोक्षदं भवति ध्रुवम्।
योगो हिज्ञान हीनस्तु न क्षमो मोक्षकर्मणि।।
तस्मात् ज्ञानञ्च योगञ्च मुमुक्ष दृढमभ्यसेत।

क्योंकि –

अज्ञानादेव संसारो ज्ञानादेव विमुच्यते।
ज्ञानं स्वरूप मेवादौ ज्ञानं ज्ञेयैक साधनम्।।
ज्ञातं येन निजं रुपं कैवल्पं परमं पदम्।
निष्कलं निर्मलं साक्षात् सच्चिदानन्द रूपकम्।
उत्पत्ति स्थिति संहार स्फूर्ति ज्ञान विवर्जितम्।।
एतज्ज्ञान मिति प्रोक्त मथ योगं ब्रवीमि ते।।

अर्थात् योग से हीन ज्ञान निश्चय ही मोक्ष देने वाला कैसे हो सकता है और ज्ञान से रहित योग भी मोक्ष कर्म मे समर्थ नही हो सकता है इस कारण मोक्ष को चाहने वाले साधक को ज्ञान और योग दोनों का ही अभ्यास दृढ़ता से करना चाहिए।

क्योंकि अज्ञान से संसार होता है और ज्ञान से संसार से मुक्त होता है इस कारण प्रारम्भ में ज्ञानार्जन करने के लिए ज्ञान स्वरूप को समझ ले क्योंकि ज्ञेय ही एक साधन जिसको कहा गया है उसे ज्ञान कहते है इसी कारण यह कहा गया है कि जिसने अपने स्वरूप को ही अच्छी तरह समझ लिया है उसके लिए ही परम पद कैवल्य है वही निष्कल, निर्मल और साक्षात् सच्चिदानन्द स्वरूप है वही जीवन्मुक्त है –

उत्पत्ति, स्थिति, संहार स्फूर्ति ज्ञान से रहित होना ही ज्ञान कहा गया है जिसका भली प्रकार श्रवण, मनन, निदिध्यासन द्वारा भली प्रकार बोध होने पर ही मनुष्य ज्ञानवान कहा जा सकता है। इस प्रकार ज्ञानी होकर योगी होने पर मुक्ति निश्चय रुप से करतलगत समझिये।

योग के भी अनेक भेद हैं। साधारणतया महर्षियों ने योग के चार भेद बताये है – (1) मन्त्र योग (2) लय योग (3) हठयोग (4) राजयोग।

मन्त्रयोग – श्रीगुरु प्रदत्त उन्हीं की आज्ञानुसार निश्चित समय और प्रकार से मन्त्र का जप करने से अभीष्ट सिद्धि प्राप्त होती है उसे मन्त्रयोग कहते हैं।

मातृकादि युत मन्त्रम्, द्वादशाब्दं तु यो जपेत्।
क्रमेण लभते ज्ञानमणिमादि गुणान्वितम्।।
अल्प बुद्धिरिमं योगं, सेवते साधकाधम:।

उपनिषद् वाक्य –

जपयोग – निष्काम ईश्वर का ध्यान चलते, सोते, उठते, बैठते, खाते, पीते, निरन्तर

करने से चित्त का जप करोड़ों प्रकार का कहा गया है :–

लय गोगाश्चित्त जपः, कोटिशः परिकीर्तितः।

गच्छनातिष्ठन्स्वपनमुन्जन्, ध्यायेन्निष्कलमीश्वरम्।।

उपनिषद् वाक्य –

स एव लय योगः स्यात्।

हठयोग – यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि भेद से आठ प्रकार का बतलाया है।

यमश्च, नियमश्चैव, आसनम्, प्राण संयमः।

प्रत्याहारो धारणा च, ध्यान भ्रू मध्यमे हरिम्।।

योग में विघ्न –

आलस्यम् बन्धनं धूर्मगोष्ठी, मंत्रादि साधनम्।

धातुस्त्री लौल्यकादीनि, मृगतृष्णा मयानिवै।।

ज्ञात्वा सुधीस्त्यजेत् सर्वान्, विघ्नान् पुण्य प्रभावतः।

आलस्य, बातचीत, कुसंग, मन्त्रादि साधन धातुवाद स्त्री, लौल्यता इत्यादि मृग–तृष्णामय विघ्न बताये गये हैं इन्हें बुद्धिमान पुरुष अपने पुण्य के प्रभाव से छोड़ दें।

तदनन्तर आसन जप करके पदम्, सिद्ध किसी भी आसन से प्राणायाम किसी एकान्त सुखकर स्थान में बैठकर करें, जहां पर किसी प्रकार के शब्द न सुनने को मिल सके और न ही किसी प्रकार के कष्ट ही सामने आयें, जिससे प्राणायाम आदि में विघ्न हो सके जिससे शास्त्राज्ञानुसार धीरे–धीरे अभ्यास करता हुआ प्राणायाम संख्या को पूर्ण कर सके। स्थान सुगन्धियुक्त द्रव्यों के सुगन्धित पुष्पों आदि से सुवासित हो।

आसनम् –

नात्युच्छितम् नाति नीचं, चैलाजिन कुशोत्तरम्।

आसन न अधिक ऊँचा और न अधिक नीचा हो कुश, मृगचर्म, वस्त्र, इस प्रकार बिछाये जायें जिससे बैठने में कष्ट न हो जिससे आसन न हिले। 'स्थिर सुखमासनम्' अर्थात् स्थिर और सुखप्रद आसन हो।

प्राणायाम के प्रकार – साधक ऐसे आसन पर अभ्यस्त आसन से बैठें – परंतु बैठने में शरीर, गर्दन, सिर बिल्कुल सीधे एक लाइन में (समकाय शिरोग्रीवः) हाथ जोड़कर बैठें और इस प्रकार पूर्व अपने इष्टदेव को प्रणाम करके दाहिने हाथ का अंगूठा नासिका के दाहिने भाग (पिंगला नाड़ी) को रोक कर बायें भाग (इड़ा नाड़ी से) धीरे–धीरे प्राण वायु को खींचकर अनामिका और कनिलिका से वामनासा पुट को रोक कर कुम्भक करे और साथ ही जालन्धर बन्ध लगावे। यथा–शक्ति कुम्भक के बाद पिंगला नाड़ी (दक्षिण) नासापुट से धीरे–धीरे रेचक

के साथ उड्डीयान बन्ध लगाता हुआ वायु को रेचन करे फिर इसी प्रकार दक्षिण नासापुट से वायु का आकर्षण यथाशक्ति धारण करे और उन्हीं बन्धों के साथ वामनासापुट से वायु रेचन करे अर्थात् जिससे रेचन करे उसी से पूर्वोक्त प्रकार से पूरक और कुम्भक रेचक करता हुआ प्राणायाम करे।

ऋजु कामः प्राञ्जलिश्च प्रणमेदिष्ट देवताम्।
ततो दक्षिण हस्तस्यांगुष्ठेनैव पिङ्गलाम्।।
निरुद्धय पूरयेत् वायु मिड्या तु शनैः शनैः।
यथा शक्ति, अविरोधने ततः कुर्याच्च कुम्भकम्।।
पुनस्त्यजेत पिङ्गलयाशनैरेव नवेगत।
पुनः पिङ्गलया पूर्य पूरयेदुदरं शनै।।
यथा त्यजेत्तया पूर्य धारियेदविरोधतः।

इस प्रकार प्राणायाम करने से नाड़ी शुद्धि होती है तब शरीर हल्का हो जाता है शरीर पर कान्ति प्रतीत होती है उदर की अग्नि दीप्ति हो जाती है और शरीर में अवश्य ही दुबलापन लक्षित होने लगता है।

नाड़ी शुद्धि के लक्षण –

यदातु नाड़ी शुद्धिः स्यात्तदा चिन्हानि वाह्यतः।
जायन्ते योगिनो देहे तानि वक्ष्यम्यशेषतः।।
शरीर लघुता दीप्तिर्जाठराग्नि विवर्धनम्।
कुशत्वञ्च शरीरस्य तदा जायेत निश्चितम्।।

योग साधक साधारण तथा योग विघ्न करने वाला आहार और तदनुसार बिहार आदि का त्याग करे जिससे कि योग सिद्धि सफलता पूर्वक हो सके।

शास्त्र आज्ञा –

योगविघ्न कराहारं वर्जयेत् योग वित्तमः।
लवणं सार्षपं चाम्लं मुष्णं रूक्षं च तीक्ष्णकम्।
शाक जात रामठादि बहिस्त्री पथ सेवनम्।।
प्रातः स्नानोपवासादि काय क्लेशांश्च वर्जयेत्।

नमक, सरसों का साग, खटाई, रूक्ष और तीक्ष्ण वस्तुओं का परहेज रखे। इसी प्रकार हरे शाक, हींग, आग से तापना, स्त्री और मार्ग का सेवन तथा प्रातःकाल स्नान आदि शरीर क्लेशों का भी बचाव करें।

पथ्य – योग साधन के प्रारम्भ में दूध और घी का अधिक सेवन भोजन में होना चाहिए

इसी प्रकार गेहूँ, मूँग की दाल, शालि चावल आदि वस्तु योग वृद्धि करने वाली कही गई है–

उपनिषद् –

अभ्यास काले प्रथमं शस्त्रं क्षीराज्य भोजनम्।

गोधूम मुगंड शाल्यन्न योग वृद्धि करं विदु:।।

यथा सम्भव प्राणायाम करते हुए वायु धारण करने का विशेष अभ्यास करें, तभी कुम्भक सिद्ध हो सकेगा जिससे संयम में सफलता मिल सकेगी।

योगि वाक्य –

यथेष्ट धारणात् वायो:, सिद्धयेत् केवल कुम्भक:।

केवले कुम्भके सिद्धे, रेचपूर विवर्जिते।।

न तस्य दुर्लभम् किन्चित्, त्रिपुलोकेषु विद्यते।

इस प्रकार प्राणायाम करने से सफलता के लक्षण इस प्रकार बतलाये हैं कि पहिले शरीर में पसीना आता है उसे शरीर से मल देना चाहिए जिससे कमजोरी न हो फिर जब शक्ति बढ़ने लगती है तब कम्प होता है इसके बाद तीसरी श्रेणी शरीर से आसन त्याग की है जिसे दार्दुरी संज्ञा दी गई है।

योग शास्त्र का प्रमाण –

प्रस्वेदो जायते पूर्वम्, मर्दनं तेन कारयेत्।

ततोऽपि धारणाद्वायो:, क्रमेणैव शनै: शनै:।।

कम्पो भवति देहस्यासन्, स्थस्य देहिन:।

ततोऽधिकतराभ्यासात्, दार्दुरी स्वेन जायते।।

''एक लक्ष्य अपनाओ। उस लक्ष्य को ही अपना जीवन कार्य समझो। हर क्षण उसी का चिन्तन करो, उसी का स्वप्न देखो, उसी के सहारे जीवित रहो। मस्तिष्क, मांसपेशियाँ, नसें आदि शरीर के प्रत्येक अंग उसी विचार से ओतप्रोत हों और तब तक अन्य प्रत्येक विचार को किनारे पड़ा रहने दो। सफलता का यही राजमार्ग है, इसी मार्ग पर चलकर अब तक आध्यात्मिक महापुरुष पैदा हुए हैं। अन्यों को केवल बोलने वाले यंत्र समझो।''

–स्वामी विवेकानन्द

योग - आसन

जानुशिरासन

यह आसन महामुद्रा की प्रतिकृति है। महामुद्रा में ठोडी छाती में लगा कर जालन्धर बन्ध साथ में लगाया जाता है, और साथ में प्राणायाम की भी विधि महामुद्रा में साथ–साथ है, महामुद्रा बहुत ही लाभकारी मुद्रा है, किन्तु क्योंकि उसका वर्णन सभी योगाचार्यों ने मुद्राओं में किया है अतः उसका वर्णन पूर्ण विधि से मुद्राओं में ही किया जायेगा।

<u>विधि</u> :–

सम सूत्रता से बैठ जाइये। सीधे बैठकर अपने एक पैर को अपनी जंघा के साथ सटा कर उसकी **एड़ी** योनिस्थान लिंग नाल के नीचे लगाये रखिये, दूसरे पैर को सामने की ओर

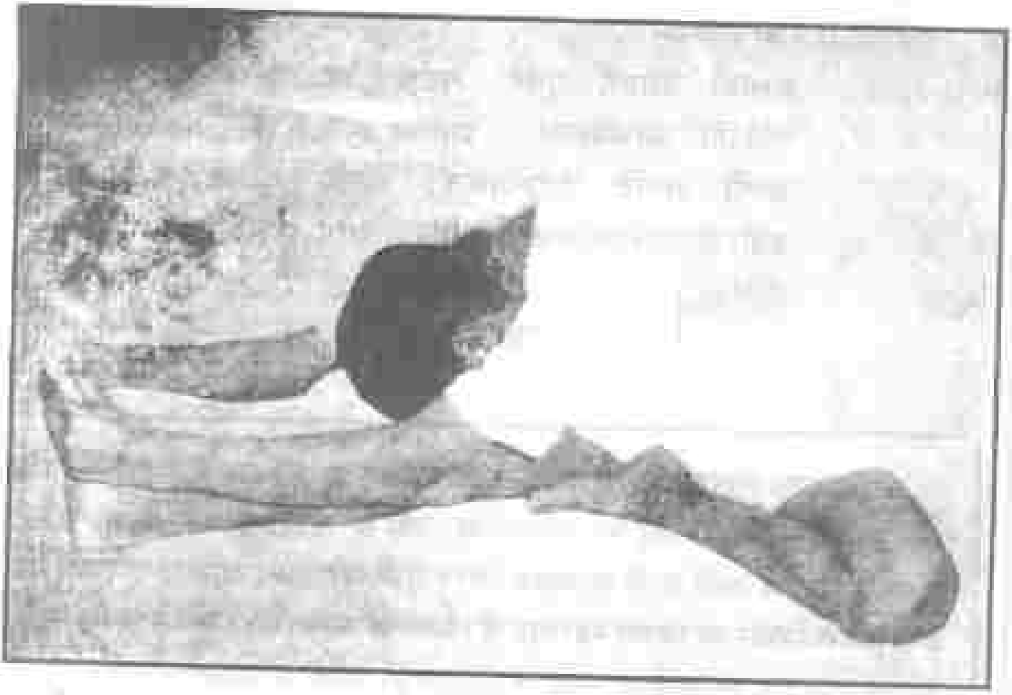

लम्बा फैलाकर उस पैर का अंगूठा या सम्भव हो सके तो पूरा पंजा ही पकड़ लीजिए, फैला हुआ पैर जमीन के साथ बिल्कुल सटा रहे, इसके बाद पैर के पंजे को ऊपर की ओर तनाव के साथ

खींचते हुए अपना मस्तक घुटने पर लगा दें। इसी प्रकार इस पैर को बदल कर पहले पैर की तरह जंघा पर जमाकर व दूसरे पैर को फैलाकर उसके भी अंगूठे या पंजे को पकड़ कर तनाव के साथ ऊपर की ओर खींचते हुए अपने मस्तक को घुटने पर लगा दें, इसी का नाम **'जानुशिरासन'** है. दोनों पैरों को बदल–बदल कर करना चाहिए, जितना पहले पैर से किया हो उतना ही दूसरे पैर से भी जरूर करें तभी आसन पूर्ण होगा।

करने का समय :–

इस आसन के करने में हर व्यक्ति को पहले–पहले कुछ कठिनता होती है। किन्तु अभ्यास से धीरे–धीरे अवश्य ही बन जायेगा। प्रथमाभ्यास में इस आसन को 15 या 20 सैकेन्ड से शुरू करें व प्रतिदिन 4 या 5 सैकन्ड बढ़ाते हुए 2 मिनट तक बढ़ा लें, तो उत्तम रहेगा। शरीर के बलाबल को देखकर शनै: शनै: और भी अधिक बढ़ाया जा सकता है।

लाभ :–

शरीर में दृढ़ता देता है। वात रोग नाशक है, यकृत एवं प्लीहा की बीमारियों को पूरा–पूरा लाभ पहुँचाता है। आँतों को सबल बनाता है। कोष्ठबद्धता दूर होकर जठराग्नि बढ़ती है, भूख खूब लगती है। यकृत पर पूरा–पूरा प्रभाव पड़ने पर रक्त शुद्ध होता है। श्वास में लाभप्रद है। वीर्य रक्षा के लिए श्रेयस्कर एवं स्तम्भक है।

शोक संवेदना

ये सूचित करते हुए अत्यन्त दु:ख हो रहा है कि औरय्या निवासी श्री बृजेन्द अग्रवाल जी का 1 दिसम्बर 2011 को देहावसान हो गया है। वे विगत कई वर्षों से श्री सिद्धगुफा सवांई आश्रम में रहकर निर्माण कार्यों की देखरेख कर रहे थे। उनके पीछे दो पुत्र तथा एक पुत्री व पत्नी हैं। इस दु:ख की वेला में सिद्धयोग परिवार दु:खी परिवारी जनों को अपना हार्दिक संवेदना प्रेषित करता है। श्री प्रभुजी इन्हें इस दु:ख को सहन करने की शक्ति दें।

– सम्पादक सिद्धयोग

पातंजल-योग दर्शन की महत्ता

– ब्रह्मलीन तपोमूर्ति आचार्य श्रीराम शर्मा

कुछ लोग योग का मुख्य स्वरूप उद्योग (अभ्यास) समझते हैं – कुछ 'वियोग' (वैराग्य) बतलाते हैं, कुछ संयोग (प्रणिधान) पर जोर देते हैं। किन्तु वस्तुतः योग इन तीनों मार्गों का सम्मिलित है। जिस में एक को भी छोड़ने से उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो सकती। जब हम योग शब्द की व्युत्पत्ति और अर्थ पर ध्यान देते हैं तो इसके दो प्रधान अर्थ प्रतीत होते हैं। एक जीव और ईश्वर का और ईश्वर अथवा आत्मा और परमात्मा का सम्मिलन अर्थात् अद्वैतानुभूति, और दूसरा अभ्यास तथा वैराग्य द्वारा चित्त वृत्तियों की एकाग्रता जिसका परिणाम समाधि अवस्था में पहुँचना होता है। योग दर्शन के भाष्यकार व्यास जी ने योग का अर्थ समाधि ही बतलाया है। क्योंकि उसी अवस्था में पहुँच कर वृत्तियों के पूर्णतः निरोध और परमात्मा से तादात्म्य की स्थिति प्राप्त हो सकती है।

अथर्ववेद में एक मन्त्र है – *'अन्ति सन्त न जाहित अन्ति सन्त न पश्यति'* अर्थात् पास में बैठे हुए को छोड़ता नहीं और पास बैठे हुए को देखता नहीं। इसका आशय यह है कि जीव पास में बैठे हुए साथी (प्रकृति) में चिपटा हुआ है पर पास में बैठे अन्य साथी (परमात्मा) को देखता भी नहीं। सांख्य तथा योग–दर्शनों में इन्हीं समस्याओं पर विचार किया गया है। सांख्य के मतानुसार हमारे जीवन के दुःखों का कारण यह है कि मनुष्य प्रकृति से अधिक संलग्न है, उससे छुटकारे का प्रयत्न नहीं करता और योग की दृष्टि से कारण यह है कि मनुष्य परमात्मा को देखता नहीं उससे संयोग नहीं करता। संसार में प्रकृति में अनुचित आसक्ति रखने के कारण मनुष्य जिन दुःखों का अनुभव करता है और जिनसे छुटकारा पाने के लिए ही समस्त दर्शनों की रचना हुई है उनको योग–दर्शन में पाँच क्लेश कहा गया है जिनका नाम है – अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभि–निवेश। योग दर्शन में इन पाँचों से छुटकारा पाने का उपाय बताया गया है। इस दृष्टि से किसी दर्शन को यदि हम व्यावहारिक कह सकते हैं तो वह योग ही है। उसमें जिन तथ्यों का प्रतिपादन किया है, उनकी प्रत्यक्ष अनुभूति का मार्ग भी बतलाया गया है। और इस विशेषता के कारण ही योग दर्शन को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। एक अन्य लेखक ने इसकी महत्ता के बारे में कहा है –

'योग के सैद्धान्तिक पक्ष के अतिरिक्त उसकी (योगदर्शन की) सबसे बड़ी विशेषता उसके व्यवहारिक पक्ष की है। जहाँ अन्य दर्शन हमें ईश्वर की सत्ता का आभास मात्र देते हैं वहाँ योग दर्शन हमें ईश्वर प्राप्ति का क्रियात्मक मार्ग बतलाता है। यह केवल ईश्वर प्राप्ति का मार्ग ही नहीं बतलाता बल्कि आसन प्राणायाम यम, नियम और ध्यान की विधियाँ भी बतलाकर हमारे शरीर को बोली, मन को पवित्र तथा चित्त को एकाग्र बनाता है। चाहे ... में शरीर तथा

मस्तिष्क दोनों को स्वस्थ बनाने वाला और साथ ही मोक्ष की प्राप्ति कराने वाला कोई दर्शन है तो वह योग दर्शन ही है।

यद्यपि प्राचीन काल से ही योग की अनेक शाखायें प्रचलित हैं और श्री भगवत् गीता में भी राज–योग, ज्ञान–योग, भक्ति–योग आदि रूप में योग का उल्लेख किया गया है पर देशी विदेशी सभी विद्वान इस सम्बन्ध में एक ही मत हैं कि लोक में अष्टांग योग के आदि प्रचारक पातंजली मुनि ही हैं और उन्हीं के आधार पर बाद में भिन्न–भिन्न शाखाओं और विधियों का आविर्भाव होता गया है। अनेक लेखक तो 'योग' का अर्थ पातंजली का योग दर्शन ही बतलाते हैं वास्तव में पातंजली में प्रथम सूत्र में ही योगश्चित्त वृत्ति निरोध: (चित्त वृत्तियों को रोक लेना ही योग है) कहकर योग का जो मूल स्वरूप और दृढ़ आधार बतला दिया है। और वह अभी तक स्थिर है और जितने भी अन्य मार्ग या विधियां निकाली गई हैं वे सब स्थिति, पात्र और अधिकार भेद से उसी आधार पर प्रतिष्ठित हैं। इसी से किसी विद्वान ने कहा है –

ताव देव निरोद्धव्यं – यावद्ध दि गतं क्षयम्। एतज् ज्ञानश्च ध्यानश्च–शेषेऽन्यो ग्रन्थ विस्तर:।।

अर्थात् तब तक मन का निरोध करे जब तक कि सब वासनायें नष्ट न हो जाएं। यही ज्ञान है, यही ध्यान है बाकी सब ग्रन्थों का विस्तार है'।

पातंजल योग दर्शन का प्रधान उपदेश यही है कि मनुष्य स्थूल भाव से प्रगति करके सूक्ष्मता की ओर अग्रसर होता जाए अथवा भौतिकता को कम करके आत्म तत्व को ग्रहण करता जाए। मनुष्य की चित्त वृत्तियाँ ही भौतिक तथा स्थूल जगत की वस्तुओं को ग्रहण करने वाली उनमें लिप्त होने वाली होती हैं। जैसे–जैसे उनका निरोध किया जाएगा अर्थात् इनको बहिर्मुख अवस्था से अन्तर्मुख बनाया जायेगा वैसे–वैसे मनुष्य आत्म जगत में प्रविष्ट होता जायेगा। इसका मुख्य साधन किसी विशेष विधि के द्वारा चित्त वृत्तियों का एक लक्ष्य पर केन्द्रित करना है। इस अभ्यास द्वारा अन्त में समाधि अवस्था की प्राप्ति हो जाती है जो कि योग मार्ग का प्रधान लक्ष्य है। पतंजलि ने इसलिए आरम्भ में ही योग सिद्धि के मूल मन्त्र चित्तवृत्ति निरोध का उपदेश दिया है और आगे चलकर उसकी पूर्ति के लिए अष्टांग योग का साधन बतलाया है। जिन व्यक्तियों को योग विद्या का यह पूरा कोर्स (पाठ्यक्रम) कठिन जान पड़ता है अथवा जो अपनी प्रकृति या रुचिभिन्नता के कारण क्रमश: पूरी शिक्षा ग्रहण करने में असमर्थ हैं वे इसी साधन विधियों के किसी एक अंग या उपाय को लेकर उसी के द्वारा लक्ष्य तक पहुँचने की चेष्टा करते हैं। इसी के फलस्वरूप लय–योग, जप–योग, मंत्र–योग, ज्ञान हठ–योग आदि शाखाओं की उत्पत्ति हुई है। जिनकी संख्या अब एक सौ से भी ऊपर हो गई है पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन सब विभिन्न योग ग्रन्थों का आदि स्त्रोत पातंजलि योग दर्शन ही है। योग दर्शन चार भागों में बँटा हुआ है। जिसमें सब मिलाकर 195 सूत्र हैं समाधि पाद में 5:, साधन पाद में 51, विभूति पाद में 55 और विभूति पाद में 34 सूत्र हैं। **योग शक्ति भण्डार की कुन्जी है।**

मैं कृतज्ञ तुम्हारा

- ब्रह्मचारी बृजमोहन वशिष्ठ यामनी आश्रम खैर, (अलीगढ़)

मैं कृतज्ञ तुम्हारा प्रभु जी,
मैं कृतज्ञ तुम्हारा।
जब--जब नैय्या डोली मेरी,
तुमने मुझे संभारा।
एक बार डूबा गंगा में,
तुम ने दिया किनारा।
एक बार अनुष्ठान बाद में
छुटा शरीर हमारा।
करुणा कर करुणा निधि आये,
मैं ने तुम्हें पुकारा।
गंगा जल मुख में डाला था,
फिर से प्राण संचारा।
हुआ निराश दर्शन बिन तेरे,
सूझे नहीं किनारा।
गुरुदेव बन कृपा कीन्हीं,
जानत है संसारा।
प्रभु रामलाल गुरु चन्द्रमोहन,
तू किया योग प्रचारा
एक बार जब छत से गिर गया,
तुम ने मुझे संभारा।
कहाँ तक कृपायें गाऊं तेरी,
माया अपरम्पारा।
हे दयालु हे कृपालु
तू जग तारण हारा,
बृजमोहन है शरण तुम्हारी,
चरण कमल का सहारा।

स्वस्थ रहने की रामबाण दवा

(साभार कल्याण से)

(गतांक से आगे)

आहार का सर्वोपरि सिद्धान्त तो यह है कि भूख लगने पर आवश्यकतानुसार भूख से कम मात्रा में भोजन करना चाहिए।

(2) **श्रम** – जीवन में भोजन के साथ श्रम का कम महत्व नहीं है। आजकल श्रम के अभाव में आलस्य और प्रमाद के कारण विभिन्न प्रकार के रोगों की उत्पत्ति हो रही है। ऐसे बहुत लोग हैं, जिन्हें जीवन में कभी भी सच्ची भूख की अनुभूति नहीं होती।

स्वस्थ रहने के लिए दैनिक जीवनक्रम में कुछ घण्टे ऐसे बिताने चाहिए जिससे सहज श्रम हो जाय। जो लोग स्वाभाविक रूप से शारीरिक श्रम नहीं कर सकते, उन्हें व्यायाम, योगासन और भ्रमण के द्वारा श्रमशील होना चाहिए।

आजकल सिनेमा, होटल तथा क्लबों में जाने के लिए और टी.वी. आदि देखने के लिए तो सरलता से समय मिलता है, किंतु व्यायाम के लिए समय के अभाव की शिकायत बनी रहती है। जो व्यक्ति श्रम या व्यायाम नियमित रूप से करते हैं, उन्हें सामान्यतः दवा लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती, वे स्वाभाविक रूप से स्वस्थ रहते हैं।

(3) **विश्राम**– आहार तथा श्रम की तरह विश्राम भी शरीर की अनिवार्य आवश्यकता है। अत्यधिक परिश्रम से थके व्यक्ति में विश्राम के पश्चात् नवजीवन का संचार होता है। रात की गहरी नींद से शरीर में पुनः नयी शक्ति तथा मन में नयी उमंगों का प्रादुर्भाव होता है। विश्राम के बाद श्रम और श्रम के बाद विश्राम – दोनों एक दूसरे के पूरक हैं।

प्रायः लोग शरीर को तो विश्राम देते हैं, किंतु मन को विश्राम नहीं देते। शरीर एक स्थान पर पड़ा रहता है, किंतु मन इधर–उधर भटकता रहता है। नींद के समय शरीर शान्त रहता है किंतु मन स्वप्न में फँसा रहता है। ध्यान तथा भगवन्नाम–स्मरण से मन को विश्राम मिल सकता है। इसी प्रकार जीवन में संयम–नियम का पालन करने से मन को शान्त रखने में सहायता मिलती है। निद्रा भी विश्राम का सर्वोत्तम साधन है। शरीर तथा मन – दोनों को विश्राम मिलने पर ही पूर्ण विश्राम की स्थिति बनती है।

(4) **मानसिक संतुलन** – मानसिक विश्राम के बाद शारीरिक क्रिया होती है। शरीर सदा मन का अनुगामी होता है। मन में संकल्प उठता है इसके बाद ही शरीर द्वारा क्रिया आरम्भ होती है। शुद्ध चित्त में पवित्र संकल्प या विचार आते हैं और अशुद्ध चित्त में बुरे संकल्प या विचार आते हैं। मन शरीररूपी यन्त्र का संचालक है। मन या चित्त को शुद्ध रखने पर वही सही मार्ग पर

चलेगा। इसलिए शरीर शुद्धि की अपेक्षा चित्तशुद्धि का महत्त्व अधिक है। चित्त शुद्धि के बाद शारीरिक स्वास्थ्य का सुधार स्वतः स्वाभाविक रूप से हो जायेगा।

मन के शान्त तथा प्रसन्न रहने पर सामान्यतः शरीर स्वस्थ रहेगा ही। मन में अशान्ति, क्रोध, ईर्ष्या, राग–द्वेष बढ़ने पर शरीर को रोगी बनने से रोका नहीं जा सकता। आजकल अनेक लोगों को क्रोध, चिन्ता, भय, दुःख तथा मानसिक तनाव आदि के कारण रक्तचाप, मधुमेह तथा हृदय एवं मस्तिष्क सम्बन्धी बीमारियाँ होती रहती हैं।

चित्त को शान्त और प्रसन्न रखने की दृष्टि से मानसिक आहार के रूप में हमें अपने पाँचों ज्ञानेन्द्रियों की शुद्धि करनी होगी। कान से अच्छी बातें सुनें, भजन सुनें, आँख के द्वारा भी महापुरुषों की जीवनी पढ़ें, सत्–दृश्य का अवलोकन करें, मन में अच्छे विचारों को स्थान दें तथा बुरे विचारों को त्यागें। तभी चित्तशुद्धि की प्रक्रिया प्रारम्भ होगी।

वास्तव में मानसिक स्वस्थता ही आरोग्यता की मुख्य पूँजी है। मन तथा शरीर दोनों शुद्ध एवं स्वस्थ रहने पर ही पूर्ण रूप से आरोग्य सुरक्षित रह सकता है। मानसिक सन्तुलन बनाये रखने के लिए भगवान् का भजन, प्रार्थना, अपने इष्ट का ध्यान, सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय आदि मुख्य साधन हैं। स्वस्थ रहने का अर्थ है अपने–आप में स्थित होकर शान्त एवं प्रसन्न रहना। वास्तव में शान्ति, प्रसन्नता अथवा जीवन का सम्पूर्ण रहस्य स्व में स्थित आत्म तत्त्व में विद्यमान रहना है जो उस परम तत्त्व का ही अंश है।

(5) **पंचमहाभूतों का सेवन**– यह शरीर पंचमहाभूत अर्थात् आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी से निर्मित है। जीवन की रक्षा के लिए इन पाँचों तत्त्वों की अनिवार्य आवश्यकता है।

(1) आकाश – जैसे हमारे बाहर सर्वत्र आकाश है वैसे ही हमारे शरीर के भीतर भी आकाश है। इसीलिए शरीर के भीतर असंख्य जीवनकोष हैं, जो गतिमान हैं। रक्तसंचार या वायुसंचार के लिए शरीर में खाली जगह अर्थात् आकाश की आवश्यकता अनिवार्य है।

(2) वायु – प्रायः जहाँ आकाश है वहाँ वायु भी है। चूँकि आकाश सर्वत्र है अतः वायु भी सर्वत्र है। वायु के बिना एक पल भी व्यक्ति रह नहीं सकता। जल और अन्न के बिना तो कुछ घण्टों या दिनों तक प्राण बच सकते हैं, किंतु वायु के बिना प्राणी कुछ ही क्षणों में प्राण त्याग देता है। वायु का सेवन मनुष्य चौबीस घण्टे सतत करता है, इसलिए आकाश तथा वायु का समान महत्त्व है।

जटिल रोग में जब औषधि असर नहीं करती तब रोगी को वायु–परिवर्तन कराकर स्वास्थ्य लाभ कराया जाता है। जहाँ दवा काम नहीं करती, वहाँ हवा काम कर जाती है – ऐसी कहावत प्रचलित है। प्रकृति ने जीवन की रक्षा के लिए प्रचुर मात्रा में हवा प्रदान कर रखी है।

क्रमशः

हमारा लक्ष्य

योग के जिस मार्ग का यहाँ अवलम्बन किया जाता है उसका हेतु अन्य योगमार्गों से भिन्न है। इस योगमार्ग का लक्ष्य केवल सामान्य सांसारिक देहात्मभाव से ऊपर उठकर परमात्म भाव को प्राप्त होना ही नहीं है, प्रत्युत उस परमात्म भाव के विज्ञान को इस मन, बुद्धि, प्राण और जीवन के तमस् में ले आना, इसको रूपान्तरित कर देना, इनमें भगवान् को प्रकट करना और जड़ पार्थिव प्रकृति में दिव्य जीवन निर्माण करना इसका लक्ष्य है। यह बड़ा ही दुर्गम लक्ष्य और कठिन योग साधन है; बहुतेरों को, या प्रायशः सभी लोगों को यह असम्भव ही प्रतीत होगा। सामान्य, अनभिज्ञ सांसारिक देहात्मभव में अज्ञान की जो क्रिया शक्तियाँ जमकर डटी हुई हैं वे इसके विरुद्ध हैं और इसका होना ही नहीं मानतीं और इसके होने में बाधा ही डालने का यत्न करती हैं और साधक स्वयं भी देखेगा कि अपने ही मन, प्राण और शरीर इसकी प्राप्ति में कितनी जबर्दस्त रुकावटें डालेंगे। यदि तुम इस लक्ष्य को सर्वात्मना स्वीकार कर सको,

इसके लिए सब कठिनाइयों का सामना करने को तैयार हो, पीछे जो कुछ हुआ उसे और उसके बन्धनों को पीछे ही छोड़ दो और इस भगवद्‌भाव की सम्भावना के लिए सब कुछ छोड़ देने और चाहे जो हो जाय, इसके पीछे लगाने को प्रस्तुत हो, तो ही तुम यह आशा कर सकते हो कि इसके पीछे जो महत् सत्य है उसका तुम्हें साक्षात्कार होगा। इस योग की साधना का कोई बंधा हुआ मानसिक अभ्यास क्रम या ध्यान का कोई निश्चित प्रकार, कोई मन्त्र या तन्त्र नहीं है; यह साधना आरम्भ होती है साधक की आरोहणेच्छा से; उसके अपने ऊपर या अन्दर आत्मध्यान से; अपने आपको भगवत्प्रभाव की ओर उस भगवच्छक्ति की ओर जो हमारे ऊपर है तथा उसके कार्य की ओर और उस भगवत्सत्ता की ओर जो हमारे हृदय में है-अपने आप को खोल देने से; और इन सब बातों के विरुद्ध जो-जो कुछ है उसका त्याग करने से। श्रद्धाविश्वास, आरोहणेच्छा तथा आत्मसमर्पण के द्वारा ही इस प्रकार अपने आप को भगवत्सत्ता की ओर खोल देना होता है।

-महर्षि अरविन्द

प्रेषण कार्यालय :

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक
उच्चकोटि का हिन्दी मासिक

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र

सैंवाई (एत्मादपुर) आगरा (उ.प्र.)

PRINTED MATTER BOOK-POST

श्री/सुश्री ____________________

____

____

मीडिया पोस्ट

हृदय स्पर्शी सेवा

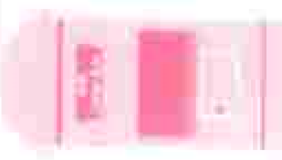

संस्थापक :- योगयोगेश्वर ... आगरा से प्रकाशित। आर.एन.आई. नं. UPHIN/2004/14508 सम्पादक : आचार्य ...